ॐ

अर्थात्

श्रीमत् परमहंस शिवनारायण स्वामी
जीके उपदेश संग्रह।



( तृतीय संस्करण )

श्रीगोपाल दास कर्तृक
प्रकाशित।

---

कलकत्ता
२५ नं रायबागान ष्ट्रीट भारतमिहिर यन्त्रे
सान्याल एण्ड कोम्पानिना मुद्रित।

सम्वत् १९६४ आश्विनवदि पञ्चमी।



मूल्य ॥०)

ॐ

# सारनितप्रक्रिया

अर्थात्

## श्रीमत् परमहंस शिवनारायण स्वामी जीके उपदेश संग्रह ।

( तृतीय संस्करण )

श्रीगोपाल दास कर्त्तृक

प्रकाशित ।

---

कलकत्ता

२५ नं रायबागान ष्ट्रीट भारतमिहिर यन्त्रे

सान्याल एण्ड कोम्पानिना मुद्रित ।

---

सम्बत् १९६४ आश्विनवदि पञ्चमी ।

मूल्य ॥०)

# भूमिका ।

धन्य है उस सर्व्वशक्तिमान् पूर्ण परब्रह्म ज्योतिः स्वरूप गुरु मातापिता को कि, जिसकी कृपालवलेश से यह सारनित्यक्रिया अर्थात् वेद शास्त्रो की सार भावार्थ सरल भाषामें निर्म्मित होकर सकल गृहस्थ भावार्थग्राही मुमुक्षु सज्जनों के हितार्थ प्रकाशित हुआ है।

इस संसार में कितने सहस्त्र शास्त्र, वेद, बाइबेल, कोरान वो सम्प्रदा कितने मत प्रचलित हुई है, जिसका संख्या वर्णनातीत है। इन सव मतों में कौन मत सत्य वो कौन मत मिथ्या और कौन शास्त्र सत्य वो कौन शास्त्र मिथ्या है। इसके निर्णय करना सामान्य गृहस्थ के पक्ष मे वहुत ही कठिन है। कारण मनुष्य अल्पायुः हैं, गार्हस्थ धर्म्म के नाना प्रकार चिन्तयों में जड़ीभूत होकर सर्व्वदा ही व्यास्त रहते हैं। वेद वेदान्तादि शास्त्र सव समुद्रवत आसीम है। अतएव यह ग्रन्थ साधारण गृहस्थलोगों के उपकारार्थ मुद्रित हुई है।

जिन्के वस्तु वोध है, उन्हीं का ज्ञान है, जिन्के ज्ञान है उन्हीं का शान्ति है। जिन्के वस्तु वोध नहीं है, उन्का ज्ञान नहीं है, जिन्के ज्ञान नहीं है, उन्का शान्ति नहीं हैं।

माता पिता का कर्त्तव्य है कि, अपने सन्तानगणों को विद्याभ्यास के सङ्ग सत् धर्म्म का उपदेश दें, जिसमें सन्तानगण व्यवहारिक वो पारमार्थिक उभय कर्म्म उत्तमरूप से निष्पन्न कर सके। पृथिवी में माता पिता ही सन्तानगणों के पक्ष में जगत गुरु हैं, और पूर्णपरब्रह्म ज्योतिः स्वरूप के स्थलाभिषिक्त हैं।

जो सन्तानगण प्रीति वो भक्ति के सहित पार्थिव माता पिता का आज्ञा पालन करते हैं, वही पूर्णपरब्रह्म ज्योतिः स्वरूप गुरु माता पिता का आज्ञा प्रीति वो भक्ति के सहित पालन करने में समर्थ होंगे और वही आज्ञा पालन के हेतु परमानन्द भोग का अधिकारी होंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं हैं। और भी कहा जा सक्ता है कि, जो माता पिता ईश्वर जगत गुरु पूर्णपरब्रह्म ज्योतिः स्वरूप के उपर प्रीति वो भक्ति रखेंगे, उनलोगों का सन्तानगण भी अवश्य ही उनलोगों को प्रीति वो भक्ति करेंगे।

इस संसार में क्या व्यवहारिक क्या पारमार्थिक कार्य्य त्रिविध प्रकार से निष्पन्न होता है। एकतो निष्काम दूसरा लोभ, तिसरा भय। निष्काम भक्ति केवल ज्ञानी वो आत्मीय प्रेमी भक्तहीव्यवहारिक वो पारमर्थिक उभय कार्य्य को जगत के उपकारार्थ करते हैं। लोभीगण विना फल के आशा व्यतीत व्यवहारिक वो पारमार्थिक कोई कार्य्य नहीं करने चाहते। अज्ञानी अर्थात तामसिक लोग विना भय से क्या व्यवहारिक क्या पारमार्थिक कोई भी कार्य्य नहीं करते है। अतएव यह ग्रन्थ जगत उपकारार्थ निस्वार्थ भाव से रची गई है।

यह ग्रन्थ की रचना लालित्य वो भाषा अलङ्कार के उपर दृष्टि न रखकर केवल सरलता भावके उपर विशेष दृष्टि रखी गई है। जिस्से साधारण गृहस्थलोग इस्को पढ़कर परमानन्द को प्राप्त होंये।

## प्रकाशककी निवेदन।

इस ग्रन्थ में पूर्णपरब्रह्म प्राप्ति के पन्थ प्रदर्शित हुई है। जैसे गणेश, विश्वनाथ, विष्णु वो देवीमाता, सूर्य्यनारायण अर्थात पूर्णपरब्रह्म ज्योतिः स्वरूप भगवान अमूल्य हैं. तैसे ही यह ग्रन्थ भी अमूल्य है। केवल पूस्तक के व्यायनिर्व्वाह के निमित्त यत्किञ्चित् मूल्य निर्द्धारित हुई है। नाना कारण वशत: जो सकल वर्णाशुद्धि प्रभृति लक्षित होगी पाठकगण वह शुद्ध कर लेंगे, यही हमारा प्रार्थना हैं।

दो॰। सत्य शुद्ध चैतन्य प्रभु, निराकार साकार।
पूर्णब्रह्म परमात्मा हि, करु कोट नमस्कार॥
आदि ज्योतिः प्रगट भये, पावक शशी दिनेश।
त्रिगुण नाम जग में धरे, ब्रह्माविष्णुमहेश॥
वैन्दी प्रथम विन्दू कर, जिनते भइ संसार।
निर्गुण गूणातीत हैं, सगुण रूप ओंकार॥
यहि मन्त्र वोज सन्त हैं, यही अक्षर हैं आद।
प्रेम सहित जो जपे यह, उतरे भवनिधि अगाध॥
वेद पुराण सागर सम, ग्रहीधर्म्म अति जाल।
अल्प आयु सब नारि नर, किमि उवरे यहि काल॥

सो॰। कलि कल्पित बहु पन्थ। निरखि शिवनारायण प्रभु।
प्रगट किये सदग्रन्थ॥ सकल शास्त्र की मथन करि।
जग की मङ्गल हेतु। नित्य क्रिया प्रभु किन्हेउ।
भवं वारिध की सेतु॥ परम पावन सार यही।

दो॰। जाके वस्तु बोधू हैं, तांहि होतु है ज्ञान।
ज्ञान ही शान्ति देतु हैं, शान्ति सकल सुख खान॥

चो० । वस्तु एक नाम बहु तेरे । देश भाषहितु नाम धनेरे ॥
जल कर नाम विविधो प्रकारा । वाटर आब सलिल आपारा ॥
त्यागि जल जो नाम को रटहीं । मिटहि न प्यास अधिक दुख सहहीं ॥
जल जल रटे मिटे नहि प्यासा । तैसि वेद पुराण अभ्यासा ॥

दो० । नाम शब्द को त्याग करि, जल को करें जु पान ।
मिटे सकल तृष्णा दुःख, सुखि होंइ बुद्धिमान ॥

चो० । ब्रह्म एक अनादी अनन्ता । ज्योति स्वरूप ईश भगवन्ता ॥
अकल अनीह अगम आपारा । अजर अमर अनामविस्तारा ॥
तिनहकर नाम अमितप्रकारा । ऋषिमुनि कल्पि किन्हबिस्तारा ।
राम कृष्ण शिव गौरि गणेशा । गड खोदा अल्ला अरु ईशा ॥
कालि दुर्गा सरसती भवानी । ब्रह्मा विष्णु दिवादि वखानी ॥

दो० । ऋषि मुनि कल्पित विविध विधि, नाम किनह विस्तार ।
नाम कर वस्तु चिन्हिये, जिन कर नाम अपार ॥
निर्गुण सगुण एकू हैं, जस बारिध कि तरङ्ग ।
उठत भिन्न भासतू है, मिटे होत इक रङ्ग ॥

चो० । सम्बत उनइस से पचावन । फागुन मास वसन्त सुहावन ॥
वदि इन्दू तिथि आदित वारा । ग्रन्थ प्रकाश भई द्वितीय वारा ॥
जो यह पढ़ि समुझहि मनमांही । तिनके निकट मोह नहि जांही ॥
सुफल होइ हैं सकल मनोरथ । सुझि हहिं निगमागम श्रुतिपथ ॥
भव भ्रम संशय रहहिन शंका । जन्म मरन ते होंइ अशंका ॥
परमानन्द में रहहि अनन्दा । जग मह विचराहीं होइ सनन्दा ॥

दो० । सरल भाष मों भणित यह, जग उपकारकि हेत ।
वर्ण अशुद्धि न गणिये जन, सन्तन दया निकेत ॥

सो० । जाके हीये अनुराग । सो यह ग्रन्थ छपाइ कर ।
वाटै सहित विराग ॥ जानी निज आत्मा स्वरूप ।
जग मह करै प्रचार ॥ सत्य धर्म्म जो गुप्त भये ।
पांइ हैं फल चार ॥ अर्थ धर्म्म काम मोक्ष सुख ।

हाईकोट के एटर्णि श्रील श्रीयुक्त बावु मोहिनीमोहन चट्टोपाध्याय एम्, ए, वि. एल, महाशय परोपकारी जगत हितैषी सज्जन धन्यवाद के योग हैं । जिनके उत्तम सहायता से आज यह ग्रन्थ तृतीय वार मुद्रित हुई । आशा है कि, इसको पढ़ने वाले लोगों भी इन सज्जन महाशय को धन्यवाद देंगे ।

प्रकाशक—

---

# सूचिपत्रम् ।

विषय । पृष्ठा ।

विषय। पृष्ठा।

ओ३म्।

# सारनित्यक्रिया।

---

## सार नित्य क्रिया किस को कहते है।

जो शुद्ध चेतन पूर्ण परब्रह्म ज्योतिः स्वरूप हैं वही सार और वही नित्य हैं, उनको पाने के लिये प्रतिदिन जो क्रिया किया जाता है और जो कार्य्य करने से सार नित्य वस्तु परमात्मा प्राप्त होते हैं उसी को सार नित्य क्रिया कहते है, ऐसेही क्रिया विचार पूर्व्वक करना प्रयोजन है। जो क्रिया करने से व्यवहारिक वो पारमार्थिक दोनों विषय उत्तम रूप से सहज में निष्पन्न होकर अभीष्ट फल को प्राप्त होय, विचार पूर्व्वक सोइ नित्य क्रिया करना उचित है; और जो कार्य्य करने से व्यवहारिक वो पारमार्थिक कोइ भी कार्य्य सिद्ध न होय सो करना उचित नही है, जैसे अन्धकार दूर करने के लिये दियासलाइ घर्षण करने से सहज में अन्धकार दूर होकर प्रकाश होता है, अनर्थक जल वो बरफ घर्षण करने से कभी प्रकाश नही होता, केवल परिश्रम ही सार होता है; तैसेहि अन्धकाररूप अज्ञानता वो पाप दूर करने के लिये भक्ति के सहित तेजोमय ज्योतिः स्वरूप परमात्मा को हृदय में धारण करने से सहज में अज्ञानता दूर होकर ज्ञान प्रकाश

होता है, नहीं तो होता नहीं, केवल परिश्रम ही सार होता है। जैसे दुग्ध में घृत सार वस्तु है, इस को प्राप्ति के आवश्यक होने से क्रिया द्वारा प्राप्त होता है। ऐसेही जो क्रिया द्वारा अज्ञानता लय कर के जगतमें परमात्मा ही जो सार नित्य वस्तु हैं, उन्को पाया जाता हैं, सोइ क्रिया को सार नित्य क्रिया कहते है।

---

## साधारण उपदेश।

सर्व्वदा सत्य शुद्ध चेतन पूर्ण परब्रह्म ज्योतिः स्वरूप गुरु, माता, पिता, आत्मा में निष्ठा रखिये। विचार पूर्व्वक व्यवहारिक वो पार-मार्थिक कार्य्य सकल गम्भीर शान्त रूप से साधन किजिये। जिस्से सर्व्व विषय में परिवार सहित परमानन्द में आनन्दरूप रह सके वह करिये। थोरे में सन्तुष्ट वो परोपकार में सर्व्वदा रत रहना। जिस्में जगत् का मङ्गल होय वह करना उचित है। जगत् का मङ्गल होने से अपना मङ्गल वो अपना मङ्गल होनेसे समस्त जगत् मङ्गलमय होता है, क्योंकि समस्त जगत् अपना ही आत्मा वो परमात्मा का स्वरूप हैं। व्यवहारिक वो पारमार्थिक इन दोनों कार्य्यों ही तिक्ष्णभाव से करना उचित है। अर्थात् कोइ कार्य्य में आलस्य न करना चाहिये। क्योंकि जिस कार्य्य में आलस्य किया जाता है, वह कार्य्य कभी उत्तम रूप से सम्पन्न नहीं होता है। मनुष्यमात्रही को अपने अपने सन्तान गणों को उत्तम सत्य शिक्षा देना उचित है, कि उन लोगों सत्य बोलें और सत्य ही में दृढ़ निष्ठा भक्ति रखें, किसी को निन्दा न करें, और सभी के निकट

प्रियवादि होवे और सर्व्व विषय में सभ्यता शिचा करें। किसी को सत्य मार्ग से कदापि विमुख न करें, सर्व्वदा सभी को सत्य मार्ग देखला दें। जैसे किसी खेत में धान रोपन करने से धान ही उत्पन्न होता है वो धान ही काटा जाता है, फिर उसी खेत में काटा रोपन करने से कांटा उत्पन्न होता है, वो कांटा ही काटा जाता है। तैसे इस संसार में कोइ किसी का इष्ट वा अनिष्ट करने से वैसा ही फल प्राप्ति होता है।

विचार पूर्व्वक देखना चाहिये कि मैं कौन हुं, मेरा स्वरूप क्या है, और भगवान पूर्णब्रह्म ज्योतिःस्वरूप माता पिता आत्मा गुरु का स्वरूप क्या है? मैं कौन स्वरूप होकर उनके कौन से स्वरूप का ध्यान, धारना वा उपासना करेंगे, कौन कार्य्य उनका प्रिय है जो सम्पन्न करके सकल विषयमें परिवार सहित परमानन्द में आनन्द रूप रह सके? मैं जन्म के पूर्व्व में कहां थे, कहां से आयें हं, और मृत्यु के उपरान्त मुझे कहां जाना होगा? खाली हाथ आयें हैं, खाली हाथ जाना होगा? न तो कोई वस्तु सङ्ग आइ है न तो जायेगी? यहां तक कि स्थूल शरीर भी सङ्ग में न जायेगी। केवल एक मात्र धर्म्म ही अर्थात् पूर्ण परब्रह्म ज्योतिः स्वरूप ही सार वस्तु हैं, और इन्हीं सङ्ग में जाते वो सङ्ग में आते हैं, और सर्व्वदा सङ्ग में रहते हैं।

ज्ञानीयों को भावर्थ के तरफ जाना उचित है, परन्तु शब्दार्थ के तरफ जाना उचित नहीं है, कारण शब्दार्थ कामधेनुवत् है, अर्थात् उसके अन्त नहीं है। भावर्थ किस को कहते है एक दृष्टान्त के द्वारा समुझ कर सर्व्व विषय में भाव ग्रहण करिये।

जैसे "जल" एक पदार्थ है, परन्तु देश देश के भाषा भेद से इस के नाना प्रकार नाम कल्पित हुइ है यथा—जल, पानी, नीर सलिल्, तोय, अम्बु, वारी, जीवन, वोयाटार, नीलु, तनि, इत्यादि।

परन्तु पदार्थ एक ही है। यदि जल पदार्थ को परित्याग करके केवल नाम वो शब्दार्थ के तरफ जाया जाये तो इस्के अन्त न मिलेगी, और प्यास भी निवृत्ति न होगी।

यदि "जल" इस शब्दके प्रत्येक अक्षरों का शब्दार्थ किया जायें तो (ज+अ+ल) यह तिन शब्द होता है। यदि वर्गीय (ज) हो तो "ज" शब्द के अर्थ एही दृश्यमान नाना वैचित्रमय स्थूल जगत हैं। और यदि अन्तःस्थ (य) हो तो "य" शब्दके अर्थ अन्तर्जगत अर्थात् मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार चारो अन्तःकरण इन्द्रियादि, आशा, तृष्णा, लोभ, मोह, अज्ञान, ज्ञान वो विज्ञान इत्यादि। "अ" से अव्यय शक्ति जिस्के द्वारा आपलोग सकल प्रकार कार्य्य करते हैं। और "ल" शब्द के अर्थ लिङ्गाकार, ज्योतिःस्वरूप स्थूल सूक्ष्म वो कारण। अब देखिये कि एक "जल" शब्द का कितने शब्दार्थ निकले।

इस के उपरान्त "जल" के और और नाम के प्रत्येक अक्षरों का कोश के अनुसार से शब्दार्थ करने लगे, तो एक युग व्यतीत हो जायेगी, और कितने शास्त्र रचना हो जायगा, उस्का अन्त नहीं है। परन्तु मैं जो इतना परिश्रम करके "जल" शब्द के अर्थ किया तिससें "जल" का तो कुछ भी न हुआ, अर्थात् "जल" जो वस्तु सोइ रही और मेरी प्यास भी न गइ, केवल परिश्रम ही सार हुइ। यदि मैं समस्त शब्दार्थ वो नाना प्रकार उपाधियों को त्याग कर "जल" जो सार वस्तु है उसको पान करते, तो सहज ही में मेरी प्यास निवृत्ति होती, और मैं भी शान्ति पाते। ऐसेही क्या पारमार्थिक वो क्या व्यवहारिक जो किसी विषय में हो न क्यों शब्दार्थ परित्याग करके केवल भावार्थ अर्थात् सत्य वस्तु ज्योतिःस्वरूप भगवान को ग्रहन करेंगे। अबोध के तरह नानारूप नाम वो शब्दार्थ लेकर भ्रम में पतित नहीं होना। पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप

गुरु, भगवान के नाना कल्पित नाम रूप उपाधि वो शब्दार्थ परित्याग कर के सार वस्तु पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरुप गुरु को धारणा करना और मूर्खों की तरह उन को परित्याग कर के हथा उनके नाना नाम और उपाधि वा शब्दार्थ लेके मन में अशान्ति पाकर सत्य धर्म्म से विमुख न होना।

और एक स्थूल दृष्टान्त द्वारा इस्के सार भाव ग्रहण करिये। जैसे मुझ को प्यास लगी तो एक मनुष्य से पुछा, कि हे भाइ! जल कहां मिलेगी जो पान कर प्यास निवृत्ति करू। उन्हो ने कहा कि यही सीधा रस्ता धर के एक क्रोश जानेसे तिन रस्ता मिलेगी; उस्के बाये ओर के दो रस्ता छोड़ कर दक्षिने रस्ता धर के कुछ दूर जाने से आठ रस्ता मिलेगी, उस्के दक्षिन के सात रस्ता छोड़ के बाये रस्ता धरके कुछ दुर जाने से एक "तालाव" देखलाइ पड़ेगा, उसमें "जल" परिपूर्ण है, परन्तु काइ से टाका है। जल देखने में नहो आता, और "तालाव मे पक्का घाट" है, परन्तु वड़ा पिच्छिल है। उसी सवजी को हटा कर "जल" पान करने से, आपका प्यास शान्ति होगा।

मैं ने उस वात को सुना वो शिखा, और दिन रात वह पाठ भी किया, परन्तु उस से प्यास शान्ति न हुइ। यदि मैं उस प्रकार के पाठ वो नाना शब्दार्थों को परित्याग कर के उसी मनुष्य के कहने अनुसार तालाव पर जाकर भावर्थ का ग्रहण अर्थात् "जल" को पान कर लेते तो सहज ही में मेरी प्यास निवृत्ति हो जाती। इहां पर "तालाव" शब्द से (आकाश) "जल" शब्द से (पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरुप भगवान) और सवजा शब्द से (अज्ञा-"काइ" नता) समुझिगे। "प्यास" अर्थ (विवेक) "पक्का" घाट अर्थ (ज्ञान) "पिच्छल" अर्थ (असत् पदार्थों में सर्व्वदा आसक्ति)।

आध्यात्मिक जगत् में भी इस प्रकार शास्त्रों के नाना शब्दार्थ

परित्याग करके सार भाव वही निराकार साकार पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप गुरु को धारण करने से आपलोगों का सकल प्रकार प्यास निवृत्ति होगी। अर्थात् अज्ञानरूपी भ्रम दूर होकर मन में शान्ति पायेंगे।

मनुष्य मात्र ही विचार पूर्व्वक ईश्वर के अज्ञा वो नियम अनुसार कार्य्य करने से ईश्वर का अज्ञा पालन करना होता है, व्यवहारिक वो पारमार्थिक उभय कार्य्य ही सिद्ध होती है, और मन में कोइ भ्रान्ति या अज्ञानता नही आती, सदा ज्ञानस्वरूप होकर आनन्दरूप से काल यापन करते है। जैसे जिस धातुके सङ्गत करके व्यवहार कार्य्य निष्पन्न होता है, वैसेहि उसी धातु के सङ्ग करके व्यवहार कार्य्य निष्पन्न करना होता है और जैसे जो धातु के सङ्गत करने से पारमार्थिक कार्य्य सिद्ध अर्थात् ज्ञान वो मुक्ति होता है, वैसे ही उसी धातु को सङ्गत करके पारमार्थिक कार्य्य को निष्पन्न करना होता है।

जैसे प्यास लगने से मनुष्यमात्र ही को तृष्णा निवृत्ति के लिये "जल" पान करने होता है, क्षुधा लगने से अन्न का आहार करने होता है, और अन्धकार होने से अग्नि द्वारा प्रकाश करने होता है। सर्व्वत्र सर्व्व विषयमें ऐसे करने से ईश्वर के आज्ञा वा नियम पालन होता है, और सहज ही में कार्य्य सिद्ध होता है।

यद्यपि अग्नि द्वारा प्रकाश न करके जल द्वारा प्रकाश करना चाहेतो, न तो ईश्वर की अज्ञा ही पालन होगा, न तो प्रकाश ही होगा; तैसे ही जब ज्ञान वो मुक्ति का प्रयोजन होता है, तब पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप भगवान माता पिता तेजोमय को अर्थात् ज्योतिःस्वरूप आत्मा गुरु विराट भगवान चन्द्रमा सूर्य्य नारायण को धारण करने होता है, और जब व्यवहार कार्य्य सम्पन्न करने होता है, तब स्थूल पदार्थों को सङ्गत करके व्यवहार कार्य्य करना होता

है। ऐसेही विचार पूर्व्वक कार्य्य करने से ईश्वर के आज्ञा वो धर्म्म पालन होता है, और सहज में ही कार्य्य निष्पन्न होता है।

---

## ब्रह्मतत्व निरूपण।

प्रत्यक्ष विचार कर के देखिये कि निराकार ब्रह्म तो मन वाणी के अतीत और इन्द्रियों के अगोचर हैं। प्रथम अवस्था में जब तक कि ज्ञान नहीं होता तब तक निराकार वो साकार परिपूर्ण रूप से अखण्डाकार परब्रह्म का धारण नहीं किया जाता है।

वेदादि शास्त्रों में लिखा है कि साकार विराट विष्णु भगवान के नेत्र—सूर्य्यनारायण, चन्द्रमा उनके मन, वायु—प्राण, आकाश—हृदय वो मस्तक, अग्नि उनके मुख, जल—नाड़ी, और पृथिवी उनके चरण है। यही विराट विष्णु भगवान के सात अङ्ग प्रत्यङ्गों को किसी शास्त्र में सात धातु वो किसी में सात द्रव्य और किसी में सात वस्तु कहते हैं। परन्तु जिन को सात धातु कहते, तिन्हीं को सात द्रव्य, सात वस्तु, उन्हीं को सात ऋषि, वो सात देवी माता और व्याकरण में सातवा विभक्ति कहते हैं। यही सातों को अहङ्कार लेकर अष्ट प्रकृति शिव के अष्ट मूर्त्ति प्रभृति कहते है। और इन्हीं को नवग्रह भी कहते है, यथाः—"ग्रह रूपी जनार्द्दनः" अर्थात् ग्रहरूपी विराट विष्णु भगवान है। और इन्ही को ब्रह्म गायत्री में सप्तम व्याहृति भी कहते हैं। यथा—ओं भुः, ओं भुवः, ओं स्वः, ओं महः, ओं जनः, ओं तपः, ओं सत्यम्; अर्थात् पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा वो सूर्य्यनारायण। यही एकही

ओंकार विराट विष्णु भगवान के अङ्ग प्रत्यङ्गों को नाना शास्त्रों में नाना नाम से नाना देव देवी कल्पना कर के वर्णन करते है, परन्तु विराट, विष्णु भगवान, निराकार, साकार, आपलोगों को लेकर परिपूर्ण रूपसे अखण्डाकार विराजमान हैं।

बाहर में उन के अङ्ग प्रत्यङ्ग सात भागमें पृथक पृथक देख पड़ते हैं, वो बोध होते हैं, परन्तु वह सात भागों में विभक्त नहीं हैं, भीतर वो बाहर में एक ही कारण सूक्ष्म स्थूल विराट भगवान परिपूर्ण रूपसे अखण्डाकार विराजमान हैं। जैसे आप के अङ्ग प्रत्यङ्ग बाहर से प्रथक पृथक देखे जाते हैं, (यथा—हाथ, पांव, नाक, काण इत्यादि) किन्तु आप पृथक पृथक नहीं हैं, आप समस्त अङ्ग प्रत्यङ्ग स्थूल, सूक्ष्म शरीर समष्टि लेकर पूर्णभाव से एक ही पुरुष विरजमान हैं, कोइ एक अङ्ग के अभाव होने से आप ही का अपूर्णता घटाता है। और आप एक एक अङ्ग का एक एक शक्ति से एक एक कार्य्य को निष्पन्न करते हैं। तैसे ही विराट भगवान एक एक अङ्ग के एक एक शक्ति से एक एक कार्य्य करते है वो करते हैं। पूर्ण परब्रह्म विराठ विष्णु भगवान के अङ्ग प्रत्यङ्ग बाहार में सात बोध होते हैं, परन्तु वह सात नहीं हैं। वही ज्योतिः निराकार साकार आपलोगों को लेकर परिपूर्ण रूप से अखण्डाकार एक ही विराजमान हैं। जैसे आप क्रोध करने से आप का अङ्ग प्रत्यङ्ग सब को लेकर क्रोधान्वित होते हैं। तैसे ही विराट विष्णु भगवान पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप सूर्य्यनारायण क्रोधान्वित होने से समस्त चराचर को लेकर क्रोधान्वित होते है। जैसे आप प्रसन्न होने से समस्त अङ्ग प्रत्यङ्गों को लेकर प्रसन्न होते हैं, तैसे ही विराट विष्णु भगवान ज्योतिःस्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण प्रसन्न होने से समस्त चराचर लेकर प्रसन्न होते हैं। क्योंकि जैसे आप शरीर भर में श्रेष्ठ प्रधान वो चेतन है और आप चेतन न रहने से

स्थूल शरीर मुरदा पड़ा रहता है और कोइ कार्य्य भी नहो होता। तैसे हो चराचरमें ज्योतिःस्वरुप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण श्रेष्ठ प्रधान वो चेतन हैं। वह हैं तो ब्रह्माण्ड के सकल कार्य्य चलता है, और वह न रहें तो कोइ कार्य्य न चले अर्थात सृष्टि लय हो जाता है।

शुद्ध चेतन, निराकार कारण परब्रह्म से सूर्य्यनारायण स्वतः प्रकाश हुयें हैं. और सूर्य्यनारायण से यह स्थूल चराचर जगत प्रकाश हुया है। जब इस जगत ब्रह्माण्ड का प्रलय होता है तब सूर्य्यनारायण बारह कला तेजो रूपी होकर इस स्थूल जगत को भस्म अर्थात् रुपान्तरित वो आपना रूप बनाकर निराकार निर्गुण कारण में स्थित होते हैं। निराकार निर्गुण भाव ग्रहण के पूर्व्व में इन्होने सङ्कल्प करते हैं कि, फिर जगत रूप से प्रकाश होंगे, और फिर उसी सङ्कल्प अनुसार अपने इच्छा से जगत रूप प्रकाश होते है। यही तो वेद वदान्तों की सार और मूल वाक्य है। इन के सिवाय और कोइ पूर्व्व में हुयी नहीं, वर्त्तमान में नहीं हैं, वो भविष्यत में भी हो नहीं सकेंगे और होने का कोइ सम्भावना भी नहीं है; यह ध्रुव सत्य जानेंगे। इसलिये सकल शास्त्रों में केवल सूर्य्य नारायण में ही सकल देव देवी ईश्वर के उपासना करने का विधि है। कारण विराट ब्रह्म सूर्य्यनारायण ही समस्त देव देवी हैं।

प्रत्यक्ष विचार पूर्व्वक देखिये कि, सुपात्र पुत्र कन्या अपने माता पिता की नेत्र के सम्मुख भक्तिपूर्व्वक नमस्कार करनेसे माता पिता की अङ्ग प्रत्यङ्गों के स्थूल, सूक्ष्म समष्टि शरीर को नमस्कार करना हो जाता हैं, और माता पिता भी नेत्र से देखते हैं कि, पुत्र कन्या हम लोगों को नमस्कार करते है। और प्रत्येक अङ्ग प्रत्यङ्ग को भिन्न भिन्न नाम धरके नमस्कार करने का कोइ भी प्रयोजन नहीं रहता है यथा—हाथ पिता का नमस्कार पांव पिता का नमस्कार इत्यादि। यदि पुत्र कन्या जाने कि, माता पिता

बहुरूप धारण करते हैं, तब एकही माता पिता को सर्व्व रूपसे एकही माता पिता जानके पूजा करते हैं; यदि एकही सत्य बहु भावसे प्रकाश होते तब सर्व्व भावमें वही एकही सत को ग्रहण करने होता है। पुत्र कन्या रूपी चराचर स्त्री पुरुष वो माता पिता रूपी पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप निराकार साकार, विराट विष्णु, भगवान। उनके नेत्र स्वरूप सूर्य्यनारायण चन्द्रमा ज्योतिःस्वरूपके सम्मुख उदय वो अस्तमें श्रद्धा भक्ति पूर्व्वक प्रणाम करने से निराकार साकार अपने को लेकर समस्त देव देवी चराचर समष्टि को प्रणाम करना हो जाता है। और इहां वहां पृथक पृथक मिथ्या कल्पित देव देवी के नाम धर कर प्रणाम करने का कोइ भी प्रयोजन नहीं रहता। यदि ज्योतिःस्वरूप ब्रह्म दिवस वो रात्रि में सूर्य्यनारायण वो चन्द्रमा रूप से प्रत्यक्ष विराजमान रहैं, तब उनके उदय वो अस्त के समय श्रद्धा भक्ति पूर्व्वक बाल वृद्ध, युवा सब कोइ नमस्कार वो प्रणाम करना चाहिये। और यदि दिवस वो रात्रि में ज्योतिःस्वरूप से प्रकाशमान न रहके निराकार भाव से रहैं, वा मेघ से दिखाइ न दें, तो आप लोग घर के भितर वा बाहर बिछौने पर वा पृथिवीपर शुचि अशुचि जिस अवस्था में रहैं पूर्व्व पश्चिम, उत्तर वा दक्षिण जिधर हो, उधर ही मुखकरके श्रद्धा वो भक्तिपूर्व्वक नमस्कार वो प्रणाम करेंगे। तो निराकार साकार देव देवी समष्टि अर्थात् भगवान को पूर्णरूपसे नमस्कार वा प्रणाम करना हो जाता है, पृथक पृथक नमस्कार वा प्रणाम करने का प्रयोजन नहो होगी। आपलोग भक्ति पूर्व्वक जिस स्थान हो से नमस्कार वो प्रणाम करेंगे उसी स्थान से वह आपलोगों को देख लेंगे, और सर्व्वदा देखते भी हैं। क्योंकि जब आपलोग उनके तेजोमय ज्योतिः के द्वारा चेतन होकर ब्रह्माण्ड देख सक्ते हैं, तब वह क्या आपलोगों को जनने वा देख नहीं सक्ते?

यहां यदि सन्देह हो कि, साकार निराकार असीम अखण्डा-कार पूर्ण परब्रह्म गुरु माता पिता आत्मा को ज्योतिःस्वरूप से धारण करके उपासना करने का क्या प्रयोजन है तब दृष्टान्त द्वारा इस्के सार भाव ग्रहण करिये। यदि आप के माता पिता किसी घर का द्वार बन्द करके खिरकी से आप को पुकारें और आप उन्के नेत्र मात्र देख कर उसी नेत्र के सामने प्रणाम करें अथवा मुष्टिका देखावे तब वह क्या नेत्र मात्र ही प्रसन्न अथवा अप्रसन्न होंगे, न समष्टिशरीर लेकर प्रसन्न अथवा अप्रसन्न होंगे? वैसेही विश्व के माता पिता अखिल माता पिता साकार निरा-कार पूर्ण परब्रह्म चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप से प्रकाशमान हैं। उन्के वही ज्योतिः नेत्र के सामने प्रणाम करने से वह पूर्ण रूप से प्रसन्न होंगे या क्षुद्र ज्योतिर्मण्डल मात्र प्रसन्न होंगे? यही सब कारणों से सर्व्व शास्त्रों में ज्ञान मुक्ति के लिये केवल मात्र सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप ही में देव देवी ईश्वर की उपासना भक्ति वो नमस्कार करने का विधि है।

चारों वेद का मूल है त्रिसन्ध्या, त्रिसन्ध्या का मूल ब्रह्मगायत्री, ब्रह्मगायत्री का मूल एक अक्षर ओंकार प्रणव मन्त्र, और एक अक्षर प्रणव मन्त्र के मूल पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप विराट विष्णु, भगवान चन्द्रमा सूर्य्यनारायण, अर्थात् विराट ब्रह्म सूर्य्यनारायण ही के नाम ओंकार हैं। यद्यपि सन्ध्या आह्निक न कर के केवल ब्रह्म-गायत्री का जप करे, और सन्ध्या आह्निक वो ब्रह्मगायत्री दोनो न करके केवल एक अक्षर ओंकार प्रणव मन्त्र, का ही जप करे, तो सकल मन्त्र, सन्ध्या आह्निक, ब्रह्मगायत्री इत्यादि का जप करना हो जाता है, वो सर्व्व फल को भी प्राप्त होता है, और सर्व्व देव देवी की उपासना करना भी होता है, अर्थात् साकार निराकार पूर्णरूप से परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप भगवान के जप वो

उपसना करना हो जाता है। और तब अनर्थक् पृथक पृथक कल्पित मन्त्रों को जप वो पृथक पृथक कल्पित देव देवी को उपासना करके समय नष्ट करने का कोइ भी प्रयोजन नहीं रहता। ज्योति: को धारणासे सर्व्वकार्य्य सिद्ध होता है।

हे मनुष्यगण! आपलोग अपने अपने मान अपमान जय पराजय सामाजिक नाना संस्कार वो स्वार्थ परित्याग करके भक्ति पूर्व्वक पूर्ण परब्रह्म ज्योति:स्वरूप विराट भगवान् चन्द्रमा सूर्य्यनारायण को नमस्कार प्रणाम वो ध्यान धारणा करिये, और इन्हीं के शरणागत होइये तो सकल देव देवों का अर्थात् पूर्ण परमेश्वर का उपासना करना हो जायेगा। और सकल प्रकार को विपदों से मुक्त होंगे, यह निश्चय सत्य सत्य हो जानेंगे इस में किसी प्रकार का सन्देह नहीं करेंगे।

यही कारणों से वेद शास्त्रों में सूर्य्यनारायण को ध्यान करने के बिषय निम्नलिखे प्रकार से विधि है, यथा—प्रात:काल में ब्रह्मारूप; मध्याह्नकाल में बिष्णुरूप, सायंकाल में शिवरूप प्रात: में कालीरूप, मध्याह्न में दुर्गारूप, सायंकाल में सरस्वती रूप। प्रात: में ऋग्वेद, मध्याह्न में यजुर्वेद वो सायंकाल में सामवेद। कालीमाता को ऋग्वेद, दुर्गामाता को यजुर्वेद वो सरस्वती माता को सामवेद कहते अर्थात काली, दुर्गा, सरस्वती माता, ऋक, यजु:, साम वेद माता वो ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, गणेश वो देवी माता और गायत्री साविचीमाता प्रभृति नाना नाम केवल विराट ब्रह्म चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ही को उद्देश करके कल्पित हुइ है। इसलिये केवल मात्र सूर्य्यनारायण ही में सकल देव देवी ईश्वर का उपासना वो ध्यान धारणा करने का विधि है। यह ज्ञानी लोग जानते हैं।

यही ज्योति:स्वरूप जगत माता पिता से विमुख होनेसे मनुष्य

लोगों का कैसी दुर्दशा है, कि जो अपने घर के इष्ट, जो भितर बाहर अखण्डाकार परिपूर्ण रूपसे अनादि काल विराजमान है। लोगोंने उनको परित्याग कर के वृथा कल्पित भिन्न भिन्न देव देवी की उपासना के भ्रम में पतित होते हैं। शास्त्र में किन को प्रकृत देव देवी कहते, वह आजतक विचार करके नहीं देखते हैं।

———

## सृष्टि सत्य है या मिथ्या।

सब लोग कहते हैं कि हमलोगों का इष्टदेव अर्थात् परमेश्वर पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान हैं। परन्तु जिन लोग का स्वरूप बोध नहीं है, उन लोग निराकार वो साकार ब्रह्म को पृथक पृथक बोध करते हैं। निराकार ब्रह्म जो चराचर साकार ब्रह्म को लेकर पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान हैं, और साकार ब्रह्म निराकार ब्रह्म को लेकर पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान अखण्डाकार से विराजमान हैं, सो इन लोग नहो जानते हैं। निराकार ब्रह्म साकार ब्रह्म को छोड़ कर कभी हो पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान हो नहीं सक्ते, और साकार ब्रह्म निराकार ब्रह्म को छोड़ कर कभी हो पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान हो नहीं सक्ते, इसमें निराकार साकार दोनो हो एक देशो व्यष्टि अङ्गहीन हो जाते हैं, कोइ भी पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान हो नही सक्ते हैं। इस लिये क्या निराकार क्या साकार उपासक किसी का भी पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान रूप से परमात्मा का उपासना नही होता है।

शास्त्र और लौकिक में दो प्रकार शब्द संस्कार प्रचलित है,

एक मिथ्या और एक सत्य। आपलोगों का जो धर्म्म अथवा इष्ट-देवता ईश्वर आल्लाह प्रभृति वह मिथ्या है, न सत्य हैं, कहां है, और कौन वस्तु हैं? यदि कहिये मिथ्या, तव तो किसी का धर्म्म वा इष्टदेवता प्रभृति कुछ भी हो नहीं सक्ते नास्ति है। मिथ्या सभी के निकट मिथ्या है। यदि वही मिथ्या धर्म्म वा इष्टदेवता से जगत और जगत के अन्तर्गत: आपलोग हुये हैं, तो आपलोगों भी मिथ्या हैं, आपलोगों का ज्ञान विश्वास धर्म्म कर्म्म भजन पूजन सब ही मिथ्या है और सभों का एकही धर्म्म मिथ्या होने से द्वेष हिंसादि का ठिकाना नहीं रहता है। यदि कहिये अथवा वोध करिये कि, आपलोग का धर्म्म या इष्टदेवता सत्य हैं, तव तो समुझ कर देखिये एक सिवाये दुसरा सत्य है नहीं होंगे. नहीं, होनेका सम्भवना भी नहीं है। सत्य कभी मिथ्या नहो होते हैं। सत्य सभीके निकट सत्य हैं, सत्य स्वत:प्रकाश हैं, सत्य के सृष्टि स्थिति नाश नहीं है। सत्य समभाव से दृश्य अदृश्य में विराजमान है। सत्य का रुपान्तर मात्र घटता है, यह जो जगत देख पड़ता है, यह सत्य से हुया है, सत्य का रुप मात्र है। सत्य अपने इच्छा से निराकार होते अर्थात् सत्य स्वयं कारण से सूक्ष्म और सूक्ष्म से स्थूल चराचर स्त्री पुरुष नाना नाम रुपात्मक जगत इत्याकार से प्रकाशमान हैं, और फिर स्थूल नामरूप सूक्ष्म में लय करके वही सूक्ष्म फिर कारण में स्थित होते हैं।

जव सत्य जगतरूप से प्रकाशमान होते हैं, तव नाना नामरूप वोध होता है, उसी को सृष्टि कहते हैं। जब नाना नामरूप संकोच करके वह कारण में स्थित होते हैं, तव उसी को प्रलय कहते हैं। जव जाग्रत और स्वप्नावस्था में आप नाना शक्ति, नाना नामरूप से चेतन होकर समस्त कार्य्य करते—यही सृष्टि है। और जब ज्ञानातीत सुषुप्ति अवस्था में रहते हैं, उसी को प्रलय

ज्ञानातीत, निर्गुणभाव कहते हैं। जगत अथवा आपलोग सत्य से हुये हैं, आपलोग सत्य हैं। आपलोगों का ज्ञान विश्वास धर्म्म कर्म्म समस्त सत्य हो सक्ता है और जिनको धर्म्म कर्म्म अथवा मंगलकारी इष्टदेवता कह कर विश्वास करते हैं वह भी सत्य हैं। कारण सत्य द्वारा हो सत्य का उपलब्धि होता है, मिथ्या से कभी भी सत्य का उपलब्धि हो नहीं सक्ता है। कारण स्वरूप सत्य माता पिता से कार्य्य स्वरूप पुत्र कन्या होने से वह लोगों सत्य स्वरूप ही विद्यमान रहते हैं, अपने को सत्य बोध करके सत्य स्वरूप माता पिता को सत्य बोल कर विश्वास करते हैं, कि हम लोगों का माता पिता सत्य हैं, हमलोग सत्य से हुये हैं, सत्यस्वरूप विद्यमान हैं। यदि कारण स्वरूप माता पिता मिथ्या हो तो कार्य्यस्वरूप पुत्र कन्या भी मिथ्या हैं, और पुत्र कन्या मिथ्या होने से माता पिता भी मिथ्या हैं। तैसे ही कारण स्वरूप पूर्ण परब्रह्म यदि सत्य हैं और उनसे यदि आपलोग जगत चराचर हुये हैं तो आपलोग सत्य से हुये हैं सत्य स्वरूप ही हैं, और आपलोग जो विश्वास करते हैं कि सत्यस्वरूप ईश्वर हैं, वह भी सत्य हैं एक व्यतीत सत्य दुसरा हो नहीं सक्ता और सत्य कभी हो मिथ्या नहीं होता सत्य सत्य ही रहते हैं, केवल मात्र रुपान्तर होते हैं। एक सत्य व्यतीत दुसरा सत्य नहीं है। वही एक सत्य ही कारण सूक्ष्म स्त्री पुरुष नामरूप लेकर सर्व्वव्यापी पूर्ण सर्व्व शक्तिमान निर्व्विशेष हैं। वही अनन्त शक्तियों से अनन्त प्रकार का कार्य्य करते हैं और कराते हैं।

यह एकही पूर्ण विषय में शास्त्र वो लोग व्यवहार में दो शब्द संस्कार है। एक अप्रकाश निराकार निर्गुण ज्ञानातीत। दुसरा प्रकाश सगुण दृश्यमान इन्द्रिय गोचर ज्ञानमय। निराकार ज्ञानातीत भाव में क्रिया का सम्पर्क नहीं रहती, जैसे आपलोगों का

सुषुप्ति अवस्था में रहते है। साकार सगुण ज्ञानमय भाव में वह अनन्त शक्ति से ब्रह्माण्ड का अनन्त कार्य्य करते हैं। निराकार वो साकार भाव में एकही विराट ब्रह्म पूर्णरूप से विराजमान हैं।

---

## सृष्टि प्रकरण।

यह दृश्यमान चराचर ब्रह्माण्ड को परब्रह्म परमेश्वर सृष्टि किये हैं, कि वह आप ही सृष्ट रूप से विराजमान हैं, यह तो इस प्रकरण के विचार्य्य का विषय है। विषय तो यह अत्यन्त ही कठिन है। कारण बिना अन्तर्य्यामी के कृपा वा ज्ञान हुये अर्थात् बिना अपनी स्वरूप की बोध हुये, सहज में लोगों को इस का बोध नहीं हो सक्ता। परन्तु स्थूल दृष्टान्त द्वारा गम्भीर वो शान्त चित्त से सूक्ष्मभाव विचार पूर्व्वक भाव ग्रहण करिये। परमात्मा पूर्ण अखण्डाकार सर्व्वशक्तिमान अनादि वो अनन्त हैं। जोंही अनन्त हैं वही तो अनादि हैं, और जो अनादि ( अर्थात् जिन के आदि नहीं हैं) वही तो असृष्ट अर्थात् उनके उत्पत्ति नहीं है, और जो अनन्त हैं उन का अन्त भी नहीं हैं। सुतरां परब्रह्म की उत्पत्ति वो लय नही हैं, और उनको किसी ने सृष्टि भी नही किया हैं। वह सर्व्वदा स्वयं आप ही आप रहते हैं। अब इस उदाहरण के जगह पर उनको महासमुद्ररूप कल्पना करिये।

जैसे समुद्र में नानाप्रकार के (छोटे, बड़े वो मझले) असंख्य तरङ्ग, फेन वो बुद्बुद (बुले) पृथक पृथक रूप से उठता है, अथच समुद्र में जो जल स्वरूप पक्ष में उस्का कोइ बिकार वा परिवर्त्तन नहीं घटता है। परन्तु उपाधि भेद में फेन, बुद्बुद वो तरङ्गादि के बिकार वो परिवर्त्तन भासता है। फेन, बुद्बुद वो तरङ्ग

प्रभृति को यदि चेतन रहता तो उनलोग का मनमें होता कि, हमलोग का उत्पत्ति, स्थिति वो लय है। परन्तु यदि उनलोग का स्वरूप ज्ञान के उदय हो तो उनलोग समुझ सकें, कि उनलोग का कोइ पृथक सामर्थ नही है, उनलोग भी जल समुद्र मात्र है। और समुद्र के उत्पत्ति, स्थिति वो लय न रहै, तो उनलोग का भी उत्पत्ति, स्थिति वो लय नही है, कारण उनलोग भी स्वरूप पक्ष में जल है, केवल मात्र रूपान्तर होता है। जलमय जो समुद्र है उन का उत्पत्ति, स्थिति वो लय कुछभी नही है, जैसे तैसे ही परिपूर्ण अखण्डाकार है। ऐसे ही ब्रह्म की सृष्टि होना वा करने का भाव समुझ लेना होता है। किन्तु इहां आपलोगों का सन्देह भी हो सक्ता है, कि समुद्र में फेन, बुद् बुद् तरङ्गादि जो उठता है, सो वायु के चलने हीं से उठता है, सुतरां वायु उन सभों का उत्पत्ति का कारण होता है। परन्तु ब्रह्म में क्या कारण हुइ कि, वह यह चराचर जगत स्वरूप से विस्तार हुयें? वेदादि शास्त्र में सृष्टि प्रकरण विषय नाना मुनि नाना प्रकार अपने अपने अवस्थानुसार बोल गेयें हैं, परन्तु ऐसे समुझ लेगें कि पूर्ण परब्रह्म यहां पर जैसे समुद्र हैं, उन के इच्छा (हम अनेक रूप होंगे) यही तो सृष्टि का कारण रूप वायु, और इसी इच्छा शक्ति को माया वा प्रकृति कहते हैं। अर्थात् आपलोग चराचर फ़ेन, बुद् बुद् तरङ्ग सदृश होते हैं।

स्वरूप पक्ष में समुद्र रूपी परमात्मा की उत्पत्ति स्थिति वो लय (नाश) कुछ भी नहीं है, परन्तु उपाधि भेद से आपलोगों का मन में बिकार वो परिवर्त्तन सृष्टि, स्थिति, लय प्रलय, जन्म, मृत्यु इत्यादि बोध होता है। जब ज्ञान वा स्वरूप बोध होने से समस्त भ्रम नष्ट हो जायेगा, और पूर्ण परब्रह्म ही केवल अखण्डाकार भासेंगे।

यदि कोइ पुछ करे, कि जो सकल ऋषि, मुनि वो अवतारगण (राम, कृष्णादि) शरीर धारण किये थें, और जिन लोग करेंगे, हमलोग अपने अज्ञानता को नाश करने के लिये उनलोगों को उपासना करेंगे अथवा पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप को उपासना करेंगे? इस के उत्तर में मैं जो कहेंगे आपलोग अपने अपने सम्प्रदा के दृढ़ कुसंस्कार मान, अपमान, जय, पराजय प्रभृति नाना सामाजिक मिथ्या स्वार्थ परित्याग करके विचारपूर्व्वक गम्भीर वो शान्त रूप से उसके सार भाव ग्रहण करिये तो आपलोग भी परमानन्द लाभ कर सकेंगें, और जगत में भी शान्ति स्थापित होगी, और आप लोगों का यथार्थ इष्ट का उपासना करना भी होगा।

समुद्र में जैसे (छोटे, बड़े, मझले) नाना प्रकार तरङ्ग, फेन, बुदबुद वारम्बार उठता है, फिर समुद्र ही में लय पाता है, तैसे ही यह ब्रह्मरूप समुद्र में ऋषि, मुनि वो अवतारगण फेन, बुद्‌बुद् तरङ्ग रूप से उठते हैं, और लय पाते हैं। अनादि काल से इसी रूप चली आती है, और अनन्तकाल चलेगी। फेन बुद्‌बुद् तरङ्ग, छोटे, बड़े, मझले जैसा ही होय न क्यों उनलोग सभी जैसे एक समुद्र जल से जन्म हुये हैं, और एक ही समुद्र जल में ही लय पावेंगे, चिरकाल पर्य्यन्त कोइ भी नहीं ठहरते, वो नहीं ठहर सक्ते हैं, ऐसे ही यही ब्रह्म-समुद्र में ऋषि, मुनि, अवतारगण, और ज्ञानी, अज्ञानी, मूर्ख, पण्डित, धनी, दरिद्र, पशु, पक्षी, कीट, पतङ्ग, वृक्ष, लता प्रभृति कहां तक कहैं, विश्व, ब्रह्माण्ड सभी फेन, बुद्‌बुद् वो तरङ्ग की सदृश्य जनमें हैं, और लय पायें हैं, अर्थात् जन्मेंगे, और लय पायेंगे। फेन बुद्‌बुद् की तरह जगत चिरकाल नहीं रहेगी, केवल समुद्र की तरह बिराट पूर्णब्रह्म जो अनादि काल से जैसे परिपूर्ण साकार निराकार अखण्डाकार हैं, तैसेही रहेंगे।

जब फेन, बुद्‌बुद, तरङ्ग प्रभृति एकही पदार्थ है, तब एक फेन बुद्‌बुद मुक्ति पाने के लिये और एक फेन वा बुद्‌बुद को यदि उपासना करे, वह कभी उस को मुक्ति नहीं दे सक्ता, कारण उनके पृथक कोइ सामर्थ नहीं है, और समुद्र से पृथक भी नहीं रहता है, जो उन को पृथक जान कर उपासना करे। परन्तु समुद्र मुक्ति दे सक्ता है, समुद्र का वह सामर्थ है। छोटे बड़े मझले किसी प्रकार के तरङ्ग, फेन, बुद्‌बुद होये न क्यों, समुद्र इच्छामात्र ही अपना रूप कर ले सक्ता है। तैसे ही फेन, बुद्‌बुद रूपी ऋषि, मुनि, अवतारगण को उपासना करना कोइ फल नहीं है; और करना निष्प्रयोजन है। जबतक उनलोग जगत में स्थूल शरीर धारण करके वर्त्तमान रहते है, तब तक उनलोग के निकट से प्रीति वो भक्ति पूर्ब्बक सत् उपदेश ग्रहण करना चाहिये। जब उनलोग फेन बुद्‌बुद को सदृश समुद्ररूपी परमात्मा में लय पाते हैं, तब उनलोग को और पृथक अस्तित्व वा प्रकाशता नहीं रहता, सुतरां उनलोगों की और पृथक उपासना भक्ति करना प्रयोजन नही है। केवल समुद्ररूपी निराकार साकार अखण्डाकार, पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप परमात्मा को उपासना करने होता है, उन्हीं एकमात्र ज्ञान वो मुक्ति दे सक्ते है। क्या स्त्री क्या पुरुष सब किसी को वह कर्त्तव्य कर्म्म है।

---

## जड़ वो चेतन।

यहां पर कोइ कोइ ऐसा प्रश्न कर सक्ते है कि, भ्रम वो अज्ञनता नाश करने के लिये किन को उपासना करें? निराकार ब्रह्म तो देख नहीं पड़ते, वह अदृश्य (अर्थात् देखने में नहीं

आते) मन वाणी को अतीत (अर्थात् मन में धारणा नहीं हो सक्ते) इन्द्रियों की अगोचर (अर्थात् आंख, कान, नाक जिह्वा, त्वक पांच ज्ञानेन्द्रिय, वो वाक्य हाथ पाव गुदा उपस्थ पांच कर्म्मेन्द्रिय में अनुभव नहीं होते)। फिर साकार ब्रह्म ज्योतिःस्वरूप को किसी किसी मत में जड़ कहते है। निदान इधर निराकार को धारणा न होने से मन अतृप्त रहता है, फिर उधर साकार ब्रह्म हुयें जड़, निदान जड़के मुक्ति देने की सामर्थ नहीं है। अतएव मुक्ति के लिये हमलोग किन को बिश्वास कर के उपासना करेंगे? यह कहना ठिक है। परन्तु यहां पर भी गम्भीर वो शान्त चित्त से जड़ वो चेतन का भाव ग्रहण करना होगा। कौन गुण से आप और ईश्वर चेतन हैं, और कौन गुण के अभाव से ज्योतिः. अचेतन हैं? जड़ वो चेतन केवलरूपान्तर वो उपाधि भेद से कहा जाता है। परन्तु स्वरूप पक्षमें जड़ वो चेतन, निराकार वो साकार संज्ञा परब्रह्म में नहीं है। निराकार वो साकार ब्रह्म परिपूर्ण रूप से अखण्डाकार चेतनमय सर्व्वदा बिराजमान हैं।

जड़ वो चेतन की यथार्थ भाव ऐसे समुझना होता है। आप जाग्रत अवस्था में चेतन, सुषुप्ति (अर्थात् गाढ़ निद्रा) अवस्था में अचेतन, वा जड़ हैं। परन्तु जाग्रत वो सुषुप्ति दोनों अवस्था हो में आप एकही व्यक्ति बिराजमान हैं। केवल आपका अवस्था भेद से आप को चेतन वा अचेतन अर्थात् जड़ कहा जाता है। ऐसे हो परब्रह्म का जड़ भाव वो चेतन भाव उपाधि भेद से उभय भाव ही संज्ञामात्र है, परन्तु स्वरूप पक्ष में परब्रह्म परिपूर्णरूप से अखण्डाकार सर्व्वदा ही जो है वही विराजमान हैं। जिन लोग साकार जगत् रूप से प्रकाशमान विराट भगवान तेजोमय चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप को जड़ कहते हैं, वह प्रथम बिचार कर के देखें कि, वह स्वयं जड़ हैं या चेतन? यदि वह

कहे कि, मैं जड़ हुं, तब तो जड़ का कोइ बोधाबोध नहीं है, बिचार करने का सामर्थ नहीं है। परन्तु आपमें बोधाबोध है बिचार करने का सामर्थ भी है निदान आप जड़ किस प्रकार हुयें? यदि कहिये कि, मैं चेतन हुं, तो कहिये चेतन एक हैं वा अनेक? परन्तु चेतन एक सिवाय दो हैं नहीं। और भी कहिये आप निराकार हैं वा साकार? यदि कहिये कि, मैं निराकार हुं, तो निराकार ब्रह्ममें अज्ञान, ज्ञान, विज्ञान, स्वप्न, जाग्रत वो सुषुप्ति प्रभृति अवस्था नहीं है, सुतरां कोइ भी अवस्था का परिवर्त्तन नहीं है। किन्तु आप में प्रतिदिन तिन अवस्था परिवर्त्तन होता है, यह आप प्रतिदिन जान सक्ते है। स्वप्न, जाग्रत वो सुषुप्ति यही तिनों अवस्थायों में आप प्रतिदिन पड़े रहते हैं।

स्वप्न, जाग्रत वो सुषुप्ति अर्थात् अज्ञान, ज्ञान, विज्ञान यह जो तिन अवस्था है, यह साकार ब्रह्ममें है, या निराकार ब्रह्ममें है? यदि कहिये निरकार ब्रह्म में है, तो आपका कहना भुल होगा, नही तो वेदादि शास्त्र मिथ्या होगा। क्यों कि, कोइ शास्त्र ऐसा नहीं कहता कि, निराकार में अज्ञानता वो अवस्थायों को परिबर्त्तनादि है। यदि कहिये कि, मैं साकार हुं, तो कहिये आप साकार कौन बस्तु हैं? साकार ब्रह्म तो प्रत्यक्ष बिराट रूप से बिराजमान हैं। वेदादि शास्त्र में लिखा है कि उनकी अङ्ग प्रत्यङ्ग पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा वो सूर्य्यनारायण। इन के सिवाय साकार ब्रह्म और कोइ हैं नहीं, और होगी भी नही। इन के मध्य में आप कौन सा हैं? अर्थात् पृथिवी वा जल वा अग्नि इत्यादि एक कोइ हैं अथवा सम्पूर्ण मिल के समष्टि हैं? यदि कहिये मैं इन के मध्य में एक कोइ हैं, तो कहिये इन के मध्य में कौन सा है जल न ज्योतिः? यदि कहिये जल हैं, तव तो जल का कोइ भी बोधाबोध नहीं है,

जैसा सुषुप्ति का अवस्था और यदि कहिये तेजोमय ज्योतिः हैं, तो ज्योतिः में अज्ञानता नहीं है, कारण ज्योतिः तेजोमय ज्ञान शुद्ध चेतन स्वरूप हैं। यदि कहिये मैं यही सब की समष्टि बिराटरूप हुं, तो जब आप निद्रा जाते हैं तब आप का स्थूल शरीर बिराट तो पड़ी रहती है, और प्राण वायु भी चलती रहती है, तब जो आप सोते हैं सो कौन सोता? उस समय आप में कौनसा तत्व का अभाव होता है जिस से आप का बोधाबोध नहीं रहता, और कौन तत्व का प्रकाश होने से आप जाग्रत वा चेतन हो कर बोधाबोध करते हैं। परन्तु निराकार ब्रह्म में अवस्थायों का परिवर्त्तन नहीं है। जिस में एक अवस्था का बोधाबोध रहेगा, और दूसरे अवस्था का बोधाबोध नहीं रहेगा, यह अवस्था परिवर्त्तन साकार ब्रह्म में है। यदि कहिये कि, मैं इन के कोइ भी नहीं है, तो इन के सिवाय साकार जब और कोइ नहीं हैं, तब आप कौन हैं? आप जब के निराकार नहीं हैं, और साकार भी नहीं हैं, और जब निराकार वो साकार सिवाये जगत में और कुछ भी पदार्थ नहीं है, परन्तु आप प्रत्यक्ष विद्यमान हैं तब आप कौन हैं? वह कहिये। यदि कहिये मेरा बोध नहीं है कि निराकार या साकार, जड़ या चेतन तो जो अबोध मनुष्य को अपने ही स्वरूप का बोध नहीं है कि, मैं कौन हुं—निराकार या साकार, जड़ या चेतन, तब वह अबोध मनुष्य बिराट ब्रह्म जगदात्मा चेतनमय माता पिता चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप को किस प्रकार से जड़ कह कर मनमें करते हैं। वह मनुष्य कितने हो वेदादि शास्त्र पढ़े न क्यों, उपासना बिना किस प्रकार से बिराट ब्रह्म सूर्य्यनारायण जड़ वा चेतनमय परब्रह्म हैं, सो जानने वा चिनने सकेंगे? आप जो चेतनमय चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप को जड़ कहते हैं, आप गम्भीर वो

शान्त चित्तसे विचार कर के देखिये कि, आप नेत्र द्वारा यही जो ब्रह्माण्ड देखते हैं अर्थात् यह माता, यह पिता, यह भ्राता, यह भग्नी, यह स्त्री यह पुरुष, यह पुत्र, यह कन्या, यह घर, यह द्वार, यह वृक्ष, यह लता, यह फल, यह फुल वो नानाप्रकार रङ्ग रूप इत्यादि, और शास्त्र देख कर पाठ करते हैं यही आप का चेतन गुण का है अथवा जड़ गुण का कार्य्य है? यदि जड़ गुण का कार्य्य कहिये तो अन्धकार अर्थात् जड़गुण में आपका घर में कौन वस्तु है देख कर क्या बोल सक्ते हैं? कभी ही नहीं और यदि कहिये कि, मेरा चेतन गुण का कार्य्य है, तो यह चेतनगुण किस का है? आपका स्वयं है, अथवा किसी दूसरे का? यदि कहिये आपके स्वयं का है तो आप जब अन्धकार में रहते हैं तब आपका चेतनगुण आपका सङ्ग ही में रहतो है, अथच उस समय आपका नेत्र रहते भी क्यों नहीं देख सक्ते? निदान आप को अवश्य ही स्वीकार करने होगा कि जिस के द्वारा दर्शन कार्य्य होता है, सो चेतन गुण आपका नहीं है, और किसी दूसरे का है। अब देखिये कि वह कौन हैं और कहां पर हैं। अन्धकार रात्रमें जव आप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण के अंश अग्नि द्वारा प्रदिप जलाते है तब आप देख सक्ते हैं, नहीं तो देख नहीं सक्ते। अतएव अग्नि प्रकाश गुण द्वारा आप रात्र में दर्शन क्रिया किया करते है। दिन में सूर्य्यनारायण स्वयं प्रकाश होते हैं, तब उन के प्रकाश अर्थात् यतकिंचित् चेतन गुण द्वारा आप रूप ब्रह्माण्ड दर्शन करते हैं।

अब यहां आप का चेतनगुण रहते भी आप चन्द्रमा सूर्य्य-नारायण वो अग्नि के चेतनगुण प्रकाश सिवाये देखने नहीं पाते हैं। अतएव प्रकाशगुण चेतन सिवाय अचेतन से होना कभी सम्भव नहीं है, जैसे निद्रितावस्था में आप अचेतन अर्थात् जड़

अवस्था रहते हैं, तब आप अन्यत्र जाकर प्रकाश होने नहीं सक्ते, जाग्रत अर्थात् चेतन अवस्था में जहां इच्छा वही जाकर प्रकाश हो सक्ते हैं तैसेही चेतनगुण न रहने से कभी ही प्रकाश गुण नहीं रह सक्ता है। जिन के प्रकाशगुण चेतन है, वह पुरुष भी चेतन हैं, वह कभी भी जड़ नहीं हो सक्ता है। जो पदार्थ जड़ है, उस के गुण भी जड़ है, यह स्वत:सिद्ध है। अतएव जब चन्द्रमा सूर्य्यनारायण वो उन का अंश अग्नि के चेतनगुण द्वारा आपलोग व्यवहारिक वो पारमार्थिक कार्य्य सम्पन्न करते हैं, तब उनको न समुझ कर किस प्रकार से जड़ कहते हैं? वही अनादि, अनन्त, नित्यशुद्ध, चैतन्य, पूर्ण परब्रह्म ज्योति:स्वरूप चन्द्रमा सूर्य्य-नारायण, जगन्माता, जगत पिता, जगदात्मा, जगद्गुरु, निराकार वो साकार रूप अखण्डाकार से चेतनमय परिपूर्ण रूप बिराजमान हैं। इन्ही बिराट पुरुष को वेदमें "ओं सहस्रशीर्षा पुरुष: सहस्राक्ष सहस्रपाद" इत्यादि लिखते हैं। अर्थात् एक बिराट ब्रह्म का आकाश मस्तक से समस्त चराचर स्त्री पुरुष के मस्तक है। एक ही बिराट पुरुष के सूर्य्यनारायण नेत्र से समस्त चरा-चर स्त्री पुरुष के नेत्र है, और एक ही बिराट पुरुष के पृथिवी चरण से समस्त चराचर स्त्री पुरुष के चरण है इत्यादि समुझ लेंगे।

जब तक जीवों का ज्ञानस्वरूप बोध नहीं होता, तब तक जगत वो जगदात्मा चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योति:स्वरूप को जड़ बोल कर संस्कार रहता है। वह जितने ही शास्त्र, वेद, वेदान्त, दर्शन, कोरान, बाइबेल, रात्र दिन पाढ़े न क्यों, अथवा सहस्र सहस्र शास्त्र रचना करे न क्यों, जब तक उपासना योग द्वारा ज्ञान स्वरूप का बोध नहीं होगा, तब तक से वह स्वयं जड़ रहेंगें, और चन्द्रमा सूर्य्यनारायण चेतन पुरुष को जड़ बोध करेंगे। जब

उपासना द्वारा जीवों का ज्ञान स्वरूप बोध होगा, तब उनके नेत्र में यह जगत ब्रह्माण्ड अखण्डाकार से प्रत्येक को लेकर पूर्णरूप से चेतनमय चन्द्रमा सूर्य्यनारायण अर्थात् ज्योतिः स्वरूपसे भासेंगे। तब और जड़ बोल कर कुछ भी बोध नहीं होगा केवल संस्कार द्वारा जड़ बोध होता है, परन्तु विचार कर के नहीं देखते कि वह जड़ या चेतन हैं? और यह भी सत्य है, जब जीवों का चर्म्म नेत्र ज्ञान नेत्र आध्यात्मिक नेत्र यही तिनों नेत्र में से कोइ भी नेत्र नहीं है, तब वह जड़ वो चेतन का सूक्ष्मता किस प्रकार से उपलब्धि करेंगें? कोइ बोल सक्ते हैं कि, चर्म्म नेत्र मनुष्य का अपना है, नहीं तो मनुष्य किस प्रकार से रूपब्रह्माण्ड दर्शन और अक्षरादि अर्थात् वेद बाइबिल कोरान प्रभृति शास्त्र पढ़कर उसका मर्म्म को ग्रहण करते हैं? परन्तु समुझ कर देखिये दिन में सूर्य्य-नारायण के चेतन प्रकाश गुण द्वारा रूप ब्रह्माण्ड दर्शन करते हैं और शास्त्रादि पढ़ कर मर्म्म ग्रहण करते है। शुक्ल पक्ष के रात्र में चन्द्रमा ज्योतिः के द्वारा यत्किञ्चित् देखते हैं, परन्तु अन्धकार रात्र में अपना स्थूल शरीर हो को देख नहीं सक्ते सामने खुब बड़ा हाथी खड़ा रहने से भी समुझ नही सक्ते कि, क्या है, घर में कहां पर क्या है, कुछ भी नही देख सक्ते हैं, अमृत के बदले विष उठा लेते हैं; रस्ता चलने से प्राण में संकट होता है। यदि चर्म्म नेत्र अपना होता तो नेत्र रहते अन्धकार में अपना हात पदादि भी क्यों नहीं देख सक्ते? उपरान्त सूर्य्यनारायण के अंश अग्नि प्रकाश गुण के साहाय्य पाने से तब नेत्र का व्यवहार चलता है नाना पदार्थ देख सक्ते हैं और शास्त्रादि पढ़ कर समुझ सक्ते हैं। विना साहाय्य से आपका कोइ सामर्थ्य हो नही रहता है। अतएव स्वीकार करने पड़ेगा कि आपका स्थूल पदार्थ दर्शनाक्षम नेत्र का ज्योतिः नही है। जब अग्नि, चन्द्रमा अथवा सूर्य्यनारायण के

प्रकाशगुण विना स्थूल पदार्थ भी देख नही सक्ते हैं तव सूक्ष्म से अति सूक्ष्म जो ईश्वर वा पूर्ण परब्रह्म हैं कैसे उनको देखेंगे वा उनका भाव समुझेंगे? जैसे अग्नि के प्रकाश व्यतीत स्थूल पदार्थ देख नही सक्ते, तैसे ही ज्ञान नेत्र के अभाव से ईश्वर परमात्मा को देखने नहीं पाते। चन्द्रमा ज्योति: प्रकाश होने से विना दिपक जलाये अपने नेत्रों में रूप ब्रह्माण्ड अस्पष्ट रूपसे देखने पाते है। वैसेही ज्ञान प्रकाश होने से अपने ज्ञाननेत्र से ईश्वर परमात्मा को देखने मिलेगा। जैसे सूर्य्यनारायण ज्योति: के प्रकाश विना दर्शनकार्य्य परिस्कार रूप से सम्पन्न नहीं होता तैसेही विना आध्यात्मिक नेत्र अपने को लेकर ईश्वर परमात्मा को अभेद दर्शन नही किया जाता। जव आप के आध्यात्मिक नेत्र खुलेगा तव किसी प्रकार भ्रान्ति नही रहेगा, उनको और अपने को अभेद दर्शन करेंगे। जव इन तिनों नेत्र में से एक भी आप का नेत्र नहीं है, तव सूर्य्यनारायण चेतनमय को कैसे पूर्णरूप बोध होगा? जिन लोग के बल्यावस्था से सूर्य्यनारायण को जड़ बोलकर बोध करते आयें हैं, और जिनलोग के बाल्यावस्था से सूर्य्यनारायण को चेतन बोल कर संस्कार पड़ा आता है, उनलोग सूर्य्यनारायण को चेतन बोध करते हैं। परन्तु, सूर्य्यनारायण जड़ वा चेतन हैं, वह इन लोग स्वयं बोध नही करते। इनलोगों का स्वयं यह ज्ञान नहीं है, कि जड़ वो चेतन किस को कहते है, संस्कार द्वारा जड़ वो चेतन शब्द को प्रयोग करते हैं। जैसे अन्धे मनुष्य को कोइ एक सफेद फुल को काला फुल कह दे, तो वह अन्धे मनुष्य उसी फुल को काला ही कह कर सब किसी के पास प्रकाश करेंगें, अथवा यदि कोइ कह दे कि सफेद है, तो वह अन्धे मनुष्य उस फुल को सफेद ही कहकर सव किसी के पास प्रकाश करेगें। कारण उन का स्वयं नेत्र नही है, कि फुल काला या शादा है, जो वह देख

कर कह सके। तैसे ही अज्ञानी मनुष्यों में जिन को जैसा संस्कार पड़ा है, वह वैसा कहते हैं, और बोध भी करते हैं। और और सकल विषय में ऐसे ही समुझ लेगें।

ओं शान्तिः ! ओं शान्तिः !! ओं शान्तिः !!!

---

## लिङ्गाकार।

शास्त्रों में जो शिव अर्थात् पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप की तिन लिङ्ग के विषय वर्णन है, वह कारणलिङ्ग, सूक्ष्मलिङ्ग, वो स्थूल लिङ्ग। कारणलिङ्ग निराकार निर्गुण, मन वाणी के अतीत। सूक्ष्म लिङ्ग ज्योतिःस्वरूप, चन्द्रमा सूर्य्यनारायण, वही ज्योतिः पञ्च ज्ञानेन्द्रिय वो कर्म्मेन्द्रिय रूपसे वर्त्तमान हैं। स्थूललिङ्ग चराचर स्त्री पुरुष प्रभृति का स्थूलशरीर है। यह स्थूललिङ्ग चराचर स्त्री पुरुष, सूक्ष्मलिङ्ग सूर्य्यनारायण में मिलेगें, और सूक्ष्मलिङ्ग ज्योतिःस्वरूप सूर्य्यनारायण, कारणलिङ्ग निराकार निर्गुणरूप में स्थित होगें। शास्त्र में इन्हीं को शिवलिङ्ग अर्थात् पूर्ण परब्रह्म को लिङ्गाकार कहते हैं। इनके सिवाय और लिङ्ग है नहीं, होगी नहीं, और होने का सम्भावना भी नहीं है। विचारपूर्व्वक देखिये कि जिस प्रकार आपलोग लिङ्ग के आकृति बनाके पूजा करते वो कराते हैं। वैसा लिङ्ग निराकार ब्रह्म में है नहीं, साकार ब्रह्म में होने का सम्भावना है। साकार बिराट ब्रह्म के अङ्ग प्रत्यङ्ग में अर्थात् पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा वो सूर्य्यनारायण में वैसा लिङ्ग कहा है, वह तो ज्योतिर्म्मय है। वैसा लिङ्ग केवल मनुष्य वो पशु इत्यादि में है। और जो पञ्च लिंग वो अष्टम मूर्त्ति वर्णन है वह पञ्चतत्व को अर्थात् पृथिवी,

जल, अग्नि, वायु वो आकाश को पञ्चलिंग कहते है। और अष्टम मूर्त्ति यथाः— क्षिति मूर्त्ताय नमः, जल मूर्त्ताय नमः इत्यादि अर्थात् पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा, सूर्य्य-नारायण को अहंकार जीवात्मा लेकर यह अष्टम मूर्त्ति शिव वा विराट परब्रह्म जगत माता पिता आत्मा को कहते हैं। यह विराट परब्रह्म निराकार साकार असीम अखण्डाकार चराचर स्त्री पुरुष को लेकर अनादि काल से पूर्णरूप बिराजमान हैं। इन्ह के सिवाय दुसरा कोइ इस आकाश में देव देवी आदि कोइ हैं नहीं, होगें नहीं, और होने का सम्भावना भी नहीं है। यह विराट परब्रह्म जोतिःस्वरूप चन्द्रमा सुर्य्यनारायण जगदात्मा जगद्गुरु जगन्माता जगत पिता जगत मंगलकारी से विमुख हो कर जगत में अमंगल हुइ है। इन्हीं को प्रार्थना वो भक्ति करने से सर्व्व अमंगल दूर कर के मंगल स्थापन करेंगें, यह ध्रुव सत्य सत्य ही जानना।

---

## बिनश्वर, अबिनश्वर, अनुलोम, बिलोम, जीव वो ईश्वर का रूप।

बिनश्वर, अबिनश्वर, अनुलोम, विलोम, शास्त्र में किस को कहते हैं, गम्भीर वो शान्तचित्त से उस्के सार भाव ग्रहण करिये। मिथ्या से कभी सत्य अर्थात् सृष्टि नहीं हो सक्ता और सत्य कभी मिथ्या हो नहीं सक्ता। सत्य सत्य ही रहते हैं और सत्य एक सिवाय दो नहीं होते हैं। सत्य ही से समस्त पदार्थ और भाव हो सक्ता है। एक मात्र सत्यस्वरूप परमात्मा शर्व्वशक्तिमान वो परिपुर्ण रूप से बिराजमान हैं। अबिनश्वर सत्य को और बिनश्वर

मिथ्या को कहते हैं। सत्यस्वरूप निराकार परब्रह्म ही कारण, सूक्ष्म, स्थूल जगत-स्वरूप विस्तारमान हैं।

यह दृश्यमान जगत सूक्ष्म शक्ति में लय होते हैं और सूक्ष्म कारणपरब्रह्म में लय होते सूक्ष्म स्थूल साकार स्वयं उत्पत्ति के जगह कारण में निराकार भाव से स्थित होते हैं, कहकर अज्ञान अवस्थापन्न मनुष्यलोग यह दृश्यमान विनश्वर जगत को मिथ्या कहा करते हैं। परन्तु विनश्वर मिथ्या नहो है। सत्य से हुये है किस प्रकार मिथ्या होंगे? केवल रूपान्तर होते हैं। स्थूल वस्तु अग्निके संग पाकर अग्नि होते, अग्नि निर्व्वाण होकर वायु रूप होते हैं। वायु निष्पन्न होकर आकाश रूप होते हैं। आकाश से अर्द्धमात्रा, अर्द्धमात्रा से विन्दु और विन्दु कारण परब्रह्म में स्थित होते हैं। इनहो को शास्त्र में विलोम कहते हैं। और फिर निराकार परब्रह्म से बिन्दुरूप, बिन्दु से अर्द्धमात्रा, अर्द्धमात्रा से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी होता है। ऐसे विस्तार होने को शास्त्र में अनुलोम कहते हैं।

विराट ब्रह्म के अङ्ग प्रत्यङ्ग रूप यही सात पदार्थ से स्त्री पुरुष की सूक्ष्म वो स्थूल शरीर गठन हुइ है। यथाः—पृथिवी से समस्त चराचर स्त्री पुरुष का हाड़ वो मांस, जल से रक्त रस वो नाड़ी हुइ हैं; अग्नि से क्षुधा लगती है, आहार करते हैं, अन्न परिपाक होता है, और वाक्य बोलते हैं, वायु से श्वास प्रश्वास चलती है, वो गन्ध ग्रहण करते हैं। आकाश से कर्ण द्वार शब्द श्रवण करते हैं, अर्द्धमात्रा चन्द्रमा ज्योतिः से मन द्वारा समस्त समुझते हैं कि, यह हमारा वह उन के हैं, और रात्रि वो दिन सङ्कल्प वो बिकल्प उठता है; और विन्दुरूपी सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप आपलोगों की मस्तक के भितर वो बाहर प्रकाश

में विराज करते हैं, उन्ही के बाहर का प्रकाश गुण द्वारा आपलोग नेत्रद्वार से रूप ब्रह्माण्ड दर्शन करते हैं, और अन्तर में चेतन गुण द्वारा बोध करते हैं। कि मैं हुं और सत् असत् बिचार करते हैं, वह जब बाहर के प्रकाश गुण संकोच करतें हैं, तब रूप दर्शन कर नहीं सक्ते। परन्तु अन्धकार घर में भी आप चेतन पुरुष रहते हैं, और बोध करते हैं कि, मैं हुं मैं हुं। यही चेतन गुण वा शक्ति के संकोच, में आपलोग और सूर्य्य-नारायण ज्योति:स्वरूप एक हो कर अर्थात् अभेद निराकार निर्गुण कारण में स्थित होते हैं।

निराकार भावमें परमात्मा या जीवात्मा का कोइ प्रकार नाम रूप या उपाधि नहीं है। और नामरूप गुण उपाधि के समष्टि जो साकार यही ब्रह्म का या जीवात्मा का साकार भाव है। और यही साकार चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योति: ही परमात्मा और जीवात्मा का रूप हैं। ऐसही बिनश्वर, अविनश्वर, बिलोम वो अनुलोम और जीवात्मा वो परमात्मा की रूप का विषय समुझ लेंगे।

---

## द्वैत वो अद्वैत निर्णय।

वेद, बाइबिल, कोरान, पुराण प्रभृति सकल शास्त्र ही के उद्देश्य है कि, एकमात्र पूर्ण परब्रह्म ज्योति:स्वरूप हैं, और सकल शास्त्र ही में लिखा है कि, इस विश्व ब्रह्माण्ड सृष्टि होने के पूर्व्व में केवल एकमात्र ब्रह्म ही थें और उन्ही से यह जगत् ब्रह्माण्ड बिस्तृत हुइ है।

अब यहां अपने अपने मान, अपमान, जय, पराजय, पक्षपात, सामाजिक सार्थपरता निराकार साकार द्वैत अद्वैत प्रभृति नाना

उपाधि त्याग करिये, और विचार पूर्व्वक गम्भीर वो शान्तरूप से इस संकल विषयों का सारभाव ग्रहण कर के परमानन्द में आनन्दरूप रहिये। लोगोंने जगत में केवल अज्ञान के वश होकर द्वैत अद्वैत, निराकार, साकार, निर्गुण सगुण और पञ्चोपासना इत्यादि नानाप्रकार उपाधि में आवड होते है। इस्की लाभ में आपलोगा का यथार्थ इष्टदेवता से बिमुख होकर सर्व्वदा परस्पर विरोध के लिये अशान्ति भोग करते हैं, स्वयं कष्ट पाते हैं और अपर को भी कष्ट देते हैं।

यथार्थ पक्ष में कोइ भी अपना इष्टदेवता को न निराकार, निर्गुण, अद्वैत, न साकार, सगुण, द्वैत भाव से उपासना करते हैं। केवल मात्र अपने अपने पक्ष के समर्थन के लिये शब्दार्थ को लेकर तर्क वितर्क वो बिरोध कर के जगत का अमङ्गल के कारण होते हैं, स्वयं भ्रष्ट होते है वो अपर को भी सत्य धर्म्म से भ्रष्ट कराते हैं, कोइ भी सार वस्तु के तरफ ध्यान नहीं रखते हैं। परन्तु जो भक्त अपने इष्टदेव अर्थात् पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप गुरु, माता पिता को निराकार निर्गुण अद्वैत भाव से होये, अथवा साकार सगुण द्वैत भाव से होयें जो भाव से हो न क्यो—जो यथार्थ सार वस्तु हैं अर्थात् पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप के उपर ध्यान रख कर भक्ति पूर्व्वक उपासना करेंगें, उन के अज्ञानता वो भ्रम भो अवश्य ही दूर होगा, और वह भी निश्चय शान्ति पावेंगें। किसी के सङ्ग उनका विरोध नहीं रहेगा, और उन से जगत का मङ्गल सिवाये कभी भी अमङ्गल नहीं होगा।

स्वरूप पक्ष में पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप में द्वैत या अद्वैत, निराकार या साकार, निर्गुण या सगुण प्रभृति उपाधि एक वारही नहीं है। वह अनादि काल परिपूर्ण रूपसे अखण्डकार, अनादि अनन्त रूपसे ज्यों के त्यों ही विराजमान हैं। ज्ञानवान पुरुष,

अवस्थापन्न मनुष्य लोगों के ज्ञान वो मुक्ति के उद्देश्य उपासना करने के लिये द्वैत या अद्वैत, निराकार या साकार निर्गुण या सगुण प्रभृति भाव ज्योतिःस्वरूप माता पिता के उपर कल्पना कर दिये हैं। उपरान्त जब ज्ञान होगा तब स्वयं ही सार भाव समुझ लेंगे।

निम्नोक्त दृष्टान्त के द्वारा द्वैत वो अद्वैत विषय की सार भाव ग्रहण करिये। जैसे माता पिता से ही पुत्र कन्या का जन्म होता है। परन्तु पुत्र कन्या का जन्मके पूर्व्व में माता पिता जो वही थें। उसमें द्वैत या अद्वैत भाव नहीं था। माता पिता नाम शब्द नहीं था वो पुत्र कन्या नाम शब्द नहीं था। परन्तु जब माता पिता से पुत्र कन्या उत्पन्न होता है, तब मातापिता वो पुत्र कन्या नाम उपाधि कल्पना किया जाता है, और मातापिता, पुत्र कन्या का कारण वोलकर कल्पित होते हैं। तौभी स्वरूप पक्ष में माता पिता पुत्र कन्या को लेकर एकही अद्वैत वस्तु जानेंगे। और वस्तु में स्वरूप पक्ष मातापिता या पुत्र कन्या नाम वो द्वैत या अद्वैत भाव एकवार हो नहीं है। कारण माता पिता वो पुत्र कन्या, नाम उपाधि त्याग करके सार वस्तु के तरफ दृष्टि करने से सार वस्तु जो वही रहते है। इसमें द्वैत या अद्वैत भाव एकवार ही नहीं है। जब माता पिता वो पुत्र कन्या नाम उपाधि के तरफ दृष्टि दिया जाता है, तव द्वैत वोलकर वोध होता है। यहां पर माता पिता शब्द में पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप वो पुत्र कन्या शब्द में आपलोग चराचर स्त्री पुरुष इत्यादि जानेंगे। जवतक जगत् के मातापिता पूर्णपरब्रह्म जगत् स्वरूप से विस्तार नहीं होते हैं तवतक वह जो वही थें। अभी भी जो वही हैं, और वाद भी जो वही रहेंगे। स्वरूप पक्ष उसमें द्वैत, अद्वैत, निराकार, साकार निर्गुण या सगुण, भाव एकवार ही नहीं है वो होंगे नहीं, होने

का सम्भावना भी नहीं है। वह जो वही परिपूर्ण रूपसे अखण्ड-कार आपलोगों प्रत्येक को लेकर अनादि काल से ही विराज-मान हैं। वह जब अपने इच्छायोंसे यह जगत्ब्रह्माण्ड चराचर स्त्री पुरुष इत्यादि रूप से विस्तार होते हैं, तब उनके मध्य में दो नाम कल्पना किया जाता है—यथा द्वैत वो अद्वैत अर्थात् जीव वो ब्रह्म।

स्वरूप पक्ष में पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप मातापिता अद्वैत जानेंगे और उपाधि भेद में जीव शब्द द्वैत जानेंगे। जबतक ज्ञान नहीं होता है, तबतक द्वैत या अद्वैत बोध होगा और वह मान कर पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप माता पिता को भक्ति पूर्व्वक उपासना वो उनका अज्ञा पालन करने होगा और करना उचित है; उससे आपलोगोंका ज्ञान वो मुक्ति होता है और आपलोग का क्या शारीरिक क्या मानसिक सर्व्व प्रकार कष्ट मोचन होता है। जब ज्ञान होगा तब द्वैत अद्वैत, निराकार साकार, निर्गुण सगुण सकल प्रकार भ्रम दुर होकर शान्ति पावेंगे। शास्त्र में लिखा है कि—"भ्रान्तिबद्धो भवेज्जीवः भ्रान्ति मुक्तः सदाशिवः" अर्थात् भ्रान्ति द्वारा आबद्ध अवस्था को जीव संज्ञा और भ्रान्ति मुक्त अवस्था को शिवसंज्ञा जानेंगे। मुक्त अवस्था प्राप्त होने से किसी के सहित किसी को भी विरोध भाव नहीं रहेगा। सर्व्व लोगों हो शान्ति पावेंगे, वो जगत् का मंगल होगा। ऐसाही सर्व्व विषय में सारभाव समुझ लेंगे।

---

## निराकार निर्गुण साकार सगुण।

निम्नलिखे दृष्टान्त से निराकार निर्गुण वो साकार सगुण ब्रह्म के विषय का सार भाव ग्रहण करिये। जैसे अग्नि ब्रह्म अप्रत्यक्ष

रूप से अर्थात् निराकार निर्गुण भाव से सकल स्थानों में सकल वस्तुओं में बिराजमान हैं, परन्तु देखने में नहीं आते। जब लकड़ी लोहे, प्रस्तर वा दियासलाइ प्रभृति घर्षण किया जाता है, तब अग्नि ब्रह्म निराकार निर्गुण भाव से अपने सकल प्रकार शक्ति, नाम, रूप लेकर साकार सगुण रूप से प्रकाशमान होते हैं वो सकल प्रकार क्रिया करते हैं, यथा:— उनके प्रकाश शक्ति वा गुण से अन्धकार लय होता, उष्णता गुण से गरम होता, उसके धुम द्वारा मेघ से जल बर्षता है। पीतवर्ण शक्ति गुण से तामसिक कार्य्य, रक्तवर्ण शक्तिगुण से राजसिक कार्य्य, और शुक्लवर्ण शक्तिगुण से सात्विक कार्य्य होता है। अग्नि ब्रह्मके चेतन शक्ति वा गुण काष्ठ, तेल बत्ती प्रभृति सकल वस्तु हो आहार करते हैं। स्थूल ब्रह्माण्ड को भस्म अर्थात् रूपान्तर कर के निराकार निर्गुण कारण में स्थित होते हैं। अतएव यह सब नाना नाम, रूप, शक्तिगुण उन्ही में प्रकाशित होता हैं, इस लिये उन्हीं को साकार सगुण नाम कल्पना की गइ हैं। और जब स्थूल ब्रह्माण्ड को भस्म कर के अदृश्य होते हैं, अर्थात् उनृह के सकल प्रकार नाम, रूप, शक्ति, गुण अपने में लय करके निराकार निर्गुण कारण में स्थिति होते हैं, तब उनृहोको निर्गुण नाम कल्पना की जाती हैं। अर्थात् परमात्मा में गुण का प्रकाश भाव को साकार सगुण और गुण के, सङ्ग अखण्ड भाव को निराकार निर्गुण जानेंगे। परन्तु दोनों भाव में वस्तु एक ही जो वही नित्य विराजमान हैं।

जो निराकार निर्गुण पूर्णपरब्रह्म हैं वही साकार सगुण जगत् रूप से विस्तार हुये हैं। और जो साकार जगत स्वरूप हैं, वही स्वरूप में निर्गुण अनादिकाल से विराजमान हैं। अर्थात् परमात्मा निराकार, साकार, अखण्डाकार से असीम शक्ति, गुण, नाम रूप, क्रिया लेकर परिपूर्ण रूप निरकार भाव से विराजमान हैं।

यदि उसमें यह सक नहीं रहता तो यह सब शक्ति, गुण, नाम, रूप कहां से आयेगीं।

जब आपलोग गाढ़ निद्रा में सोये रहते हैं, तब जैसे आपलोग का गुण क्रिया वो आत्मज्ञान के प्रकाश न रहने से आपलोगों को निराकार निर्गुण ज्ञानातीत कहा जाता हैं, और जब आपलोग ज्ञानमय जाग्रत होते हैं, तब आपलोगों का साथ ही साथ नाना प्रकार गुण, क्रिया अर्थात् बल, बुद्धि, शक्ति, ज्ञान, बिज्ञान, अहङ्कार या आत्मपर ज्ञान का प्रकाश होता है बोल कर, आपलोगों साकार सगुण ज्ञानमय कहे जाते हैं। किन्तु आप क्या जाग्रत क्या सुषुप्ति उभय अवस्था ही में सकल प्रकार गुण, क्रिय लेकर एक ही पुरुष जैसे के तैसे ही रहते हैं, स्वरूप पक्ष में आप के मध्य में निराकार निर्गुण वा साकार सगुण किसी प्रकार भी उपाधि नहीं रहता है। इसी प्रकार पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप गुरु माता पिता का निराकार निर्गुण वो साकार सगुण भाव समुझ लेंगें।

ज्ञानवान पुत्र कन्या को ऐसा मन में बिचार करना. उचित नहीं है कि, "हमारा माता पिता का सुषुप्ति अवस्था ही निराकार निर्गुण कारण अवस्था अर्थात् ज्ञानातीत स्वरूप अवस्था है। अतएव माता पिता का इसी अवस्था को पवित्र कह कर मान्य भक्ति करेंगें। और जब माता पिता जाग्रत होते हैं, तब माता पिता का वाह्यिक अवस्था है, यह अवस्था में माता पिता को भक्ति श्रद्धा नहीं करेंगें"। सब किसी को समुझना उचित है कि, सुषुप्ति के अवस्था में जो माता पिता निराकार निर्गुण भाव से रहते हैं वही माता पिता ही जाग्रत अवस्था में साकार सगुण रूप सें प्रकाश हैं। सुपात्र पुत्र कन्या का बिचार पूर्ब्बक जाग्रत अवस्थापन्न, माता पिता को बिशेषरूप से श्रद्धा भक्ति करना उचित् है, कारण माता पिता का जाग्रत अवस्था ही में सकल प्रकार बोधाबोध

होता है; नहीं तो माता पिता को केवल सुषुप्ति अवस्था में भक्ति श्रद्धा करने से क्या होगा? परन्तु यह निश्चय जानना उचित है कि, सुषुप्ति अवस्थापन्न माता पिता को अभक्ति करने से जाग्रत अवस्थापन्न माता पिता को भी अभक्ति करना होता है, और जाग्रत अवस्थापन्न माता पिता को अभक्ति करने से सुषुप्ति अवस्थापन्न मातापिता को अभक्ति करना होता है। कारण दोनों अवस्था में माता पिता एकही रहते है। अतएव निराकार साकार एक ही जानकर अखण्डाकार पूर्णरूपसे परब्रह्म ज्योतिः-स्वरूप को श्रद्धा भक्ति वो उपासना करेंगे।

---

## पञ्चोपासक की भ्रम विचार।

अज्ञान के वश से पञ्चोपासकगण न समुझकर परस्पर में कितने विरोध करते हैं, वो उस लिये कितने अशान्ति भोग करते है वह कहना ही कठिन है।

अपने इष्ट देवता अर्थात् पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप मातापिता को यथार्थ पक्ष में न पहिचानकर सभी परस्पर परस्पर के इष्ट देवतायों को पृथक मान कर निन्दा करते हैं, वो अपने इष्टदेवता को श्रेष्ठ कहकर मन में करते है; परन्तु उनलोग नहीं जानते कि कौन हमलोग का ईष्टदेवता हैं, उनके की स्वरूप क्या है, और वह कहां हैं, और किस रूप से विराज करते हैं।

शैवलोग विष्णुनाम को निन्दा करते, वो शिव नाम को मान्य करते हैं, वैष्णवलोग शिवनाम को निन्दा करते, और विष्णुनाम को मान्य करते हैं। ऐसेही सौर, गाणपत्य वो शाक्त प्रभृति उपासकगण भी अपने अपने इष्टदेवतायों का नाम मान्य करते है, और

अप·।पर इष्टदेवतायों का नाम को अपूज्य सामान्य बोधकर घृणा करते हैं। परन्तु उनलोगों का यह ज्ञान नहीं है कि, सभी के इष्टदेवता एक ही—निराकार, साकार, अखण्डाकार परिपूर्णरूप से सकल स्थान में सर्व्वदा बिराजमान हैं। केवल भ्रमान्ध लोग भिन्न भिन्न नाम कल्पना करते हैं, परन्तु इष्टदेवता भिन्न भिन्न नहीं हैं। पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप ही सभी का इष्टदेवता है।

प्रत्यक्ष शास्त्रनुसार से वो युक्ति द्वारा बिचार करके देखिये, निराकार ब्रह्म मन वाणी के अतीत वो इन्द्रियों के अगोचर उसमें पञ्च भिन्न भिन्न देवता भी नहीं है वो पञ्चोपासना भी नहीं है। कारण निराकार एकही है। वही नि।कार से साकार जगत स्वरूप त्रिगुणात्मा रूपसे बिराट ब्रह्म प्रत्यक्ष बिराजमान हैं, उन् में सकल प्रकार उपाधि शब्दार्थ वो बिचार ही सत्ता है।

यह सब कोइ जानते हैं और शास्त्र में लिखा है कि एक मात्र विराट ब्रह्म जगदात्मा गुरु माता पिता ही जगत रूप से विस्तारमान हैं। इनके सिवाय और कोइ है नहीं, हुये नहीं, होंगे नहीं, और होने का सम्भवना भी नहीं है। जगत के माता पिता यही बिराठ ज्योतिः के अङ्ग प्रत्यङ्ग ही को वेद में देव देवी माता प्रभृति कहते हैं। यथाः—पृथिवी, देवता, जलदेवता, अग्नि देवता, बायुदेवता, आकाश देवता, चन्द्रमा देवता, बिद्युत् तारागण देवता, सूर्य्यनारायण देवता। इनके सिवाय और देव देवी माता नहीं हैं, होंगे नहीं, होनेका सम्भावना भी नहीं है। शास्त्र में जो तेंत्रिश कोटी देवता कल्पना किये हैं उस के अर्थ यह है कि मङ्गलकारी बिरट ब्रह्म के सात अङ्ग प्रत्यङ्ग से जीव समस्त के स्थूल सूक्ष्मशरीर गठन हुइ है, इस लिये चराचर स्त्री, पुरुष, पशु, पक्षी, कीट; पतङ्ग, पिपीलिका प्रभृत्ति के इन्द्रियादि लेकर तेंत्रिश कोटी अर्थात् असंख्य देवता कल्पना किये हैं; जैसे कर्ण के देवता दिक-

पाल। पुरुष मात्र को शिव और स्त्रीलोग मात्र को देवी माता जानेंगी।

वेद शास्त्र में लिखा है कि, विराट विष्णु भगवान के नेत्र सूर्य्यनारायण, चन्द्रमा उनके मन, अग्नि उनके मुख, आकाश उनके मस्तक, वायु उनके प्राण, जल उनके नाड़ी, पृथिवी उनके चरण। यही विरट ब्रह्म के सिवाय पृथक पृथक देव देवी माता और नहीं है। जिस जगह जो देश जो द्वीप जो दिक पाताल में अथवा आकाश में जहां ही जाइये न क्यों यही विराट ब्रह्म यही जगत मातापिता हो को पाइयेगा। इन्हों का नाम विष्णु भगवान, विश्वनाथ, गणपति, देवी माता वो सूर्य्यनारायण, ओंकार, साविची, गायत्रीमाता हैं। और यही मङ्गलकारी ओंकार निराकार ब्रह्म के सहस्र सहस्र नाम कल्पना की गई हैं। इनके सिवाय कोई भी इष्टदेवता हैं नहीं, होंगे नहीं, और होने का सम्भावना भी नहीं है। यदि सब के इष्टदेवता एक ही पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप नहीं होते तो कैसे वेद वेदान्त प्रभृति सकल शास्त्रों में और सन्ध्या अह्निक में केवल सूर्य्यनारायण ही में सकल देव देवी के ध्यान धारणा करने का विधि किये हैं, और एकही अग्नि में सर्व्व देव देवो के नाम से आहुति देने का विधि है? केवल मात्र पूर्ण परब्रह्म ही निराकार साकार रूप से सर्व्व का इष्ट देवता हैं। इन्हीं सर्व्व स्थानो में प्रत्यक्ष विराजमान हैं, निराकार भाव से अदृश्य साकार भाव से प्रत्यक्ष दृश्यमान है। यदि आप लोग इनके सिवाये अपने अपने इष्टदेव को पृथक पृथक मन में करते हैं तो वह कहां हैं, उनको ढुढ़िये और उन्हीं को धारण कर के परमानन्द में आनन्दरूप रहने का चेष्टा करिये।

यह स्वयं सिद्ध है कि एक जगह एक मनुष्य बैठा रहे तो उन को न हटा कर अपर कोई उस जगह बैठ नहीं सक्ते हैं। एकमात्र

सर्व्वव्यापी विराट पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप गुरु, आत्मा, माता पिता ही सकल स्थानों में परिपूर्णरूप से बिराजमान हैं। यदि इनके सिवायें आपलोगों का देव देवी, मातापिता पृथक पृथक होयें, तो उन्हलोग कहां पर हैं, वा कैसे रहेंगे, और उनलोग का रूप क्या है? इन्को न हटाने से उन्हलोग तो स्थान नहीं पावेंगे, परन्तु इन्ह को हटाने के स्थान नहीं है। इन्हीं सर्व्वस्थानों में परिपूर्ण हैं। ऐसेही सार भाव को समुझ कर बिचार पूर्व्वक अपने इष्टदेवताओं को पहिचानने का इच्छा करिये।

---

## सर्व्वशक्तिमान पूर्णपरब्रह्म।

निराकार साकार चराचर, जीव जन्तु स्थावर जंगम वृक्ष लता गुल्म प्रभृति दृश्य अदृश्य जो कुछ के है और सकल प्रकार नाम रूप गुण लेकर परमात्मा पूर्ण सर्व्वशक्तिमान हैं। जैसें पूर्णवृक्ष को सर्व्वशक्तिमान वो सर्व्वगुणान्वित कहने से उसका मूल, गुँड़ि, शाखा, प्रशाखा, पत्ता, फुल, फल, मिष्टता प्रभृति सकल प्रकार गुण, शक्ति, नामरूप लेकर ही वृक्ष को पूर्ण सर्व्व गुण विशिष्ट कहा जाता है, एक मात्र शाखा, पत्र, गुण वो शक्ति छोड़ देने से जैसे पूर्ण वृक्ष कहा नहीं जाता। वृक्ष का अंगहीन होता है। ऐसेही वृक्षरूपी पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप निराकार साकार अखण्डाकार से सर्व्वगुण के सहित सर्व्वशक्तिमान पूर्ण हैं। निरा कार साकार पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप मातापिता का कोइ भी रूप, गुण वा शक्ति छोड़ देनेसे इन्ह को सर्व्वशक्तिमान पूर्णपरब्रह्म कहें नहीं जाते, अङ्गहीन करना होता है। यदि कोइ निराकार छोड़कर केवल साकार उपासना करें, अथवा साकार छोड़ कर

केवल निराकार उपासना करें, तो पूर्णभाव से आपके इष्टदेवों का उपासना करना नहीं होगा। साकार ब्रह्म एक देशी व्यष्टि और निराकार ब्रह्म एक देशी व्यष्टि हो पड़ते हैं, क्या निराकार का साकार कोई भी सर्व्वशक्तिमान वो पूर्ण नहीं होगे, दोनों ही अङ्गहीन होगा।

जिनलोग अपने अपने इष्टदेवता को पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान कहते हैं। उनलोगों को विचार पूर्व्वक समुझना उचित है कि पूर्णपरब्रह्म इष्टदेव समस्त ब्रह्माण्ड चराचर लेके पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान है, अथवा किसी को छोड़ के पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान हैं। यदि लेके पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान होवे, तो परब्रह्म को पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान होना सम्भव है। और वह होने से सर्व्व में विवाद का शान्ति होता है। और यदि छोड़ कर पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान कहिये तो परब्रह्मको पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान होना असम्भव है, कारण जिन को कोई विषय में किञ्चित् मात्र नाम, रूप, शक्ति या अपर कुछभी अभाव रहता है, उन्ह को पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान होना कभी हो सम्भव नहीं है। एक सत्यस्वरूप पूर्ण सर्व्वशक्तिमान ब्रह्म रहते और एक पूर्ण सर्व्वशक्तिमान समष्टि वा किञ्चित् शक्तिमान व्यष्टि सत्य वा असत्य कुछ हो नहीं रह सक्ते हैं। प्रत्यक्ष विचार करके देखिये यही जगतगुरु मातापिता बिराट ब्रह्म कारण, सूक्ष्म स्थूल, चराचर, स्त्री, पुरुष रूप से स्वतः प्रकाश विस्तारमान है। उनकी अङ्ग प्रत्यङ्ग पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, तारागण, विद्युत् चन्द्रमा वो सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप, जीव जन्तु स्थावर जङ्गम प्रभृति लेकर परमात्मा पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान रूप से अनादि बिराजमान हैं। यही पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान बिराट ब्रह्म के मध्य में द्वितीय पूर्ण वा व्यष्टि अथवा सर्व्वशक्तिमान वा किञ्चित् शक्तिमान कहां रहेंगे?

जैसे इस पूर्ण पृथिवी के भितर और एक पृथिवी रह नहीं सक्ती इन्ह को दूसरे जगह न हटाने से रहना सम्भव है, ऐसेही इस आकाश में विराट पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप निराकार साकार कारण सूक्ष्म स्थूल चराचर स्त्री पुरुष को लेकर सर्व्वशक्तिमान पूर्ण रूप से विराजमान हैं। यदि आपलोग इनहीं को आपलोगों का पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान इष्टदेव कहिये तो आपलोगों का इष्टदेव वो उन्का सर्व्वशक्ति रहना सम्भव है। नहीं तो यदि इन्के सिवाय आपलोग और एक पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान इष्टदेव कल्पना करिये तो वह और उन्ह के पूर्णत्व और सर्व्वशक्ति वा एक मात्र शक्ति इस आकाश के मध्य में कहां है? आप के शक्ति जैसे आप ही का स्वरूप मात्र है, तैसे ब्रह्मशक्ति ब्रह्म ही का स्वरूप है, ब्रह्मसे पृथक कुछ भी नहीं है। जगत् में यह जो समस्त नाम रूप शक्ति देखते हैं यह किस के स्वरूप वो शक्ति है? एकमात्र सर्व्व-शक्तिमान पूर्णपरब्रह्मज्योतिःस्वरूप के सिवाय दूसरा और किस के नाम, रूप, शक्ति हो सक्ता है? वृथा क्यों मान, अपमान वो सामाजिक स्वार्थ के लिये सत्य को असत्य और असत्य को सत्य, मित्र को शत्रु और शत्रु को मित्र बोध करके भ्रम में पतित होते हैं, और जगत् को भ्रम में पतित कराते हैं, सामाजिक स्वार्थ, प्रपञ्च वो परस्पर के इष्टदेवता को भिन्न भिन्न मन में करना ही जगत के अमंगल का कारण हुइ है। आपलोगों का सर्व्वशक्ति-मान इष्टदेवता निराकार साकार आपलोगों को लेकर अखण्डाकार एक ही विराट पूर्ण वो सर्व्वशक्तिमान रूप से विराजमान हैं। उन्हीं को चिनकर पूर्णरूप से उपासना द्वारा जगत् में मङ्गल स्थापन करिये, न तो पूर्ण उपासना का अङ्गहीन वो जगत् का अमङ्गल होगा।

---

## धर्म्म किस को कहते हैं।

मनुष्य मात्र ही कहते है कि, धर्म्म सब कोइ को पालन करना कर्त्तव्य है धर्म्म पालन न करने से ज्ञान वो मुक्ति नहीं होता, धर्म्म-हीन मनुष्य पशु के तुल्य है। अतएव प्रकृत धर्म्म किस को कहते हैं समुझना उचित् है। बहुत लोगों का संस्कार है कि धृ धातु से धर्म्म शब्द हुइ है, धृ धातु अर्थात् जिन के द्वारा धारण हैं, वा धारण किया जाता है, उन्हीं को धर्म्म कहते हैं। परन्तु धृ धातु वा धर्म्म कौन वस्तु है, वह उनलोग नहीं जानते और आज पर्य्यन्त बिचार करके नहीं देखा, केवल धर्म्म शब्द लेकर नानाप्रकार तर्क बितर्क करते हैं।

अब यहां बिचार करके देखिये धृ धातु वा धर्म्म कौन वस्तु हैं,—साकार, या निराकार वा निराकार साकार के समष्टि अर्थात् पूर्ण हैं? निराकार ब्रह्म में धातु संज्ञा हो नहीं सक्ते, कारण निराकार निर्गुण अर्थात् गुणातीत हैं। निराकार में धारण शक्ति नहीं है। जैसे सुषुप्ति मे आपका धारणाशक्ति नहीं रहता कि, मैं हुं वा वह हैं। साकार बिराट ब्रह्म के अङ्ग प्रत्यङ्ग ही को शास्त्र में सात धातु कहते हैं, यथाः—पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्रमा सुर्य्यनारायण। यही ज्योतिःस्वरूप बिराट ब्रह्म ही समस्त चराचर को धारण करके अनादिकाल से स्वयं अपने आधार पूर्णरूप विराजमान हैं। यही सात धातु से समस्त चराचर स्त्री पुरुषके स्थूल सूक्ष्म शरीर गठित हुइ है। इन के मध्य में कौन अङ्ग वा धातुके द्वारा आपलोग वा जगत् चराचर धृत न हो, और कौन धातु के अंश द्वारा आपलोग चेतन हो कर समस्त धारण वो बोधाबोध करते हैं वो सुषुप्ति अवस्था में आपलोगों के मध्य में कौन धातुके अंशका अभाव से वोधावोध नहीं रहता, और कौन धातु के अंश आपलोग में पुनः प्रकाश होने से आपलोग बोधाबोध वो धारण करते हैं?

यह विश्व ब्रह्माण्ड चेतन—पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप चन्द्रमा सूर्य्यनारायण परमात्मा ही निराकार साकार अखण्डाकार सर्व्वशक्तिमान रूपसे स्वयं स्वतःप्रकाश अपने अधार में आप बिराजमान हैं और इन्हीं के नाम धर्म्म वो इनके द्वारा समस्त धृत हैं, और समस्त आप ही हैं। इन्हीं के चैतन्य, वुद्धि, वा ज्ञान द्वारा आप लोग अपने को वो समस्त जगत् पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप बिराट भगवान को धारण वा बोधाबोध करते हैं। आपलोगों का यह धृ धातु ज्योतिःस्वरूप जब सुषुप्ति अवस्था कारण में लय होते हैं, अर्थात् जब आपलोग गाढ़ निद्रा में सोये रहते हैं, तब धृ धातु चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप के अंश मन, वुद्धि निराकार कारण में स्थित होते हैं वोलकर आपलोगों का बोधाबोध नहीं रहता, और जब मन वुद्धिरूपी ज्योतिःस्वरूप धृ धातु आपलोग के अन्तर में निराकार से साकार ज्योतिः अर्थात् मन वुद्धिरूप साकार भाव से प्रकाश होते है, तब आपलोगों का बोधाबोध वा धारणा होता है कि, मैं हुं या परमात्मा हैं। यही ज्योतिःस्वरूप धृ धातु से समस्त जगत धृत हैं और आपलोगों भी धारण करते हैं, जबतक यह ज्योतिः वा मन वुद्धिरूप से स्थित है, तबतक जगत चराचर उत्पति पालन वो चेतन रूपसे कार्य्य करते है। वह न रहने से समस्त ध्वंस हो जाता है। अतएव वृथा शब्दार्थ वो तर्क वितर्क परित्याग करके धृ धातु बिराट चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप परमात्मा धर्म्म को चिनकार अर्थात पूर्ण रूप से धारण करके परमानन्द में आनन्द रूप रहिये।

मनुष्य मात्र ही परमात्मा को निराकार साकार अखण्डाकार पूर्णरूप से भक्ति श्रद्धा के सहित धारण करना उचित है, जिस से ज्ञान होकर मुक्त स्वरुप परमानन्द में रह सकै। यही अनादि सनातन धर्म्म से अर्थात् पूर्णपरब्रह्म ज्योतिःस्वरूप जगद्गुरु माता

पिता परमात्मा से विमुख होने ही से जगत में नानाप्रकार कष्ट वो अशान्ति होता है। जिन के बोध नहीं है कि धर्म्म वा पर-ब्रह्म अथवा आप कौन वस्तु हैं। उनके लिये धर्म्म विषयको सत्या-सत्य बोलना वा प्रचार करना अनुचित है, और जगत् का अमङ्गल है। कारण जिन को वस्तु बोध है, उन्को ज्ञान है, जिनको ज्ञान है, उन्हो को शान्ति है। सोइ मनुष्य ही धर्म्म क्या वस्तु है, वह जानते हैं। और जिनको वस्तु बोध नहीं है, उन्को ज्ञान नहीं है, जिनको ज्ञान नही है, उनको शान्ति नही है। सुतरां धर्म्म और आप क्या वस्तु हैं किस प्रकार जानेगें? ऐसे मनुष्य द्वारा धर्म्म प्रचार न होकर अधर्म्म प्रचार होता है और इनसे अमङ्गल सिवाय मंगल होने का कोइ सम्भावना नही है। ऐसे मनुष्य राजाके दण्डयोग हैं।

---

## किस को चेतन कहते हैं?

आस्तिक्य बुद्धियुक्त बहुत लोगों ने ही मुह से कहते हैं कि, एक पूर्ण सर्व्व शक्तिमान चेतन सिवाये दुसरा कोइ आकाश में हैं नहीं और होने का सम्भव नहीं है। अथच पूर्णभाव को ग्रहण करने में आसमर्थ होकर यह समुझ नहीं सक्ते कि, निराकार साकार मंगलमय एक ही विराट पुरुष चन्द्रमा सूर्य्यनारायण ज्योति:स्वरूप चराचर को लेकर अनादिकालसे नित्य स्वत:प्रकाश बिराजमान हैं और निराकार वो साकार को भेद कल्पना करके परस्पर हिंसा द्वेश में कष्ट भोग करते हैं। निराकारवादी साकारवादी को घृणा करके जड़ोपासक कहते हैं, और साकारवादी निराकारवादी को नोरस, शुष्क ज्ञानाभीमानी कहकर तुच्छ समुझते हैं। यह दोनो सम्प्रदा के ईश्वर और एक सम्प्रदा के लोगों ने निराकार को

जगत् से भिन्न ज्ञानादि सर्व्वशक्ति कल्पना करके मनुष्य की सदृश एक पुरुष को ईश्वर, गड, खोदा प्रभृति नाम देकर उपासना करते हैं। इन लोगोंने और दो सम्प्रदा में शान्ति देना दुर रहे एक दल को शून्य उपासक वो दुसरे दल को जड़ उपासक समुझकर झगड़ा का अग्नि जलाते हैं। किस्का नाम जड़ और किस्का नाम चेतन उस्को यथार्थ धारण होने से समस्त भ्रान्ति, झगड़ा, तकरार, अप्रीति लय होकर जगत् शान्तिमय होंगे। अतएव मनुष्य मात्र ही शान्त वो गम्भीर चित्त से विचार पूर्व्वक चेतना कौन पदार्थ है वह अच्छि तरह से चिन्ह कर परमानन्द में दिन क्षय करिये।

विचार न करके दुसरेके मुह से शुनकर कोइ विषय में धारण करना उचित नही है। बुद्धि सर्व्व का है विचार पूर्व्वक सत्य को निर्णय करके धारण करिये। नहीं तो आप का कान कौआ ले गया यह बात दुसरे के मुख से शुनतेही कान पर हात न देकर कौयेके पिछे दौरना बुद्धिमान जीवों का उचित नहीं है। साकार समष्टि अथवा निराकार जड़ या चेतन यह विषय में कोइ सिद्धान्त उदय के आगे विचार करके देखिये आप स्वयं जड़ या चेतन हैं। यदि कहिये जड़, तव जड़ का तो कोइ बोधाबोध अथवा विचारशक्ति नहीं है। जैसे सुषुप्ति अवस्था में आप जड़ रहते हैं, कोइ ज्ञान वा चेतन नही रहता है। परन्तु आपका ज्ञान वो विचारशक्ति अर्थात् चेतन रहता है। यदि कहिये आप चेतन हैं, तो विचार के देखिये चेतना कौन पदार्थ है? पहिले ही देखे हैं कि वस्तु का दो प्रकार भाव है—निराकार निर्गुण और साकार सगुण। इनके सिवाये वस्तु है नहीं, और हो नहीं सक्ते हैं। अब देखिये, चेतना साकार या निराकार हैं।

यदि कहिये मैं निराकार चैतन्य हुं, तो विचार के देखिये निराकार ब्रह्म में ज्ञान, अज्ञान, विज्ञान, जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति

यह सब अवस्था नहीं है। यदि कहिये कि, जाग्रत अवस्था में मैं निराकार हैं, तो विचार पूर्व्वक पहिले ही देखिये कि, जाग्रतावस्था में आपमें जो भ्रान्ति अथवा अज्ञान भासता है वह क्या निराकार ब्रह्म का है? और भी देखिये आप तो जाग्रतावस्था में निराकार वर्त्तमान है। बाद स्वप्नावस्थामें भी क्या आप निराकार हैं, और सुषुप्तिमें भी क्या आप निराकार हैं? यदि वही हो तो निराकार कैसा है? निराकार एक सिवाय दुसरा है नहीं और उसमें कोइ भी अवस्था का परिवर्त्तन नही घटता है। जो निराकार वही निर्गुण मन वाणी के अतीत और ज्ञानतीत है; उसमे बोधावध, चेतनाचेतन विचार शक्ति नही है। जैसे आप के सुषुप्ति अवस्था में घटता है। जब "हम हैं" यह ज्ञान नहीं रहता, तब विचारादि किस प्रकार सम्भव होगा? परन्तु आप में चेतनाचेतन भाव है और वह अवस्था रोज रोज होता है, यह तो निश्चय जानते है। यदि कहिये कि, निराकार चैतन्य हैं वही अवस्था और रूपानन्तर भेद से स्थूल, सूक्ष्म, कारण जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति में एकही भावसे बिराजमान है, तो साकार निराकार प्रभेद सवही निरस्त होता हैं। क्यों कि, वह निश्चय यही होता है कि, जड़ और चेतन, साकार और निराकार प्रभृति सर्व्व विशेषण रहित हैं, एकही पुरुष के रूप गुण वो अवस्था भेद में जड, चेतन प्रभृति भावसे प्रकाशमान होकर भी जो वही रहते हैं। ऐसे धारणा होने से किसी प्रकार विवाद का जगह नही रहता है, और प्रयोजन अनुसार इस जगत का जिस से जो कार्य्य के उपयोगी जो शक्ति रही है, उस्के द्वारा वही कार्य्य सम्पन्न करके जीव परमानन्द में जीन्दगी निर्व्वाह कर सके हैं।

यदि कहिये "मैं निराकार चैतन्य, निष्क्रिय हुं मेरे अभास अर्थात् छाया इस शरीर में रहकर समस्त कार्य्य सम्पन्न करते हैं।

सुषुप्ति में वही छाया लय होता है बोलकर कोइ कार्य्य नही रहता। मैं सुषुप्ति प्रभृति तिनों अवस्था में एकही भाव से रहे हैं, तब देखिये, एकही भावसे रहना कहने से जो ज्ञान समुझ पड़ता है वह सुषुप्ति में नहो रहता है। ऐसे विचार करके जो ज्ञान वा अवस्था उदय होता है उसीके नाम तुरीया अर्थात् वही तिन अवस्था के सहित शाद्दश्यमें वही चतुर्थ अवस्था बोलकर शास्त्रादि में कल्पित हुइ है। अब विचार करके देखिये, जो निराकार निर्गुण चैतन्य हैं उन्के छाया वा आभास किस प्रकार सम्भव होगा? और उन्के द्वारा कार्य्य होना और भी असम्भव है। विशेष जड़ के शाद्दश्य में चेतन है। निराकार में शाद्दश्य घट नही सक्ता। जो दो वा इस्के अधिक पदार्थ को मन वा इन्द्रिय द्वारा ग्रहण किया जाता है, उसी में शाद्दश्य किया जाता है। निराकार निर्गुण जिनको मन के द्वारा ग्रहण नहीं किया जाता है उन्के विषय में शाद्दश्य अशाद्दश्य नही है। वह स्वयं जगत में चेतन, अचेतन दोनों भावसे विराजमान हैं। जीव अपने को चेतन कह कर उन्के निकट अचेतन से भी चेतन प्रिय है। साकार निराकार चेतनाचेतन भाव के अतीत जीवस्तु हैं, उन्में प्रीति स्थापना के लिये ही शास्त्र में चेतना बोलकर आत्म भावसे उपासना करने का विधि है। यदि कहिये कि पदार्थ चेतन (जिस को "हम" कहते हैं) वह शरीर में ही रहे हैं, अन्यत्र नही है, तो विचार करके देखिये कि, स्त्री पुरुष से उत्पन्न वो जड़ अन्नादिक से परिपुष्ट जो शरीर है उस्में चेतना कहां से आइ? यदि कहिये जगत् के बहिर्भुत से आइ हैं, तो चेतन का जगत् में आने का आप को प्रमाण करना होगा। आप क्या चेतना को जगतमें आते देखा हैं वा सुना है अथवा अपर कोइ देखा है? यदि कहिये, हम या कोइ नही देखने से भी इस्के प्रमाण का अभाव नहीं है। क्यों कि, अनेक पूर्व्व में एक समय यह ब्रह्माण्ड अचेतन् था और अब

इसमें चेतन जीव रहा है। अतएव हो तो जगत के समुदय अथवा कोइ पदार्थ का परिणति या अवस्थान्तर घटाकर चेतन उत्पन्न हुए है न तो चेतन अन्यत्र से आइ हैं। परन्तु जब जगत के प्रत्येक वो समस्त पदार्थ हो जड़ तब उसके कोइ प्रकार अवस्थान्तर अथवा शेष में सम्पूर्ण विपरीत जो चेतना वह उत्पन्न हो नहो सकती। सुतरां यह सिद्धान्त स्थिर हुइ कि जगत् के बाहर प्रदेश हो से चेतन आइ थी। अनन्तर वही चेतना हो से भिन्न भिन्न चेतन जीव का चलती है यही आपका सम्भव है। अब यहां बिचार के देखिये चेतना नहो है अथवा चेतन व्यवहार के उपयोगी शरीर है यह कोइ कभी देखे हैं या नहो? यदि नहो देखा हैं तो स्वीकार करने होगा कि, जिसको अचेतन पदार्थ कहते हैं उसी में तब चेतना आकार अवस्थिति किया था। यदि अचेतन पदार्थ एक समय चेतन के वासोपयोगी थें एसा हो तो सो उपयोगीता अब क्यों नहीं हैं? किस लिये अभी यत्र तत्र अचेतन पदार्थ में चेतनाका विकाश नहो है? क्यों अभी चेतन अचेन दो जुदा जुदा पदार्थ रहो है? और भी देखिये, अन्यत्र से चेतना आइ है, कहने से अनवस्था दोष घटता है। जो ज्ञान से चेतना आइ है उहां पर कहां से आइ? अन्यत्र से। वह अन्यत्र में कहां से आइ? एसा हो चेतना का आविर्भाव अदृष्ट रह जाता है। पहिले जो "नहो जानते" कहने से जो फल है इसमें भी वही फल है।

यह सब बात के चर्चा करके यदि कहिये कि, चेतन या मैं साकार हैं अनादिकाल साकार में बर्त्तमान हैं तो पहिले हो देखिये कि, वही साकार चेतना अर्थात् "आप" सुषुप्ति में चेतन निराकार भाव प्राप्त होते हैं, और जाग्रत में फिर साकार चेतन भाव आता है। यह स्पष्ट हो देख पड़ता है कि, आप जो वस्तु हैं वह साकार निराकार, जड़ चेतन से अतीत हैं—जड़ वो चेतन उसी वस्तु का भाव है, न तो चेतन के अचेतन वो अचेतनके चेतन

भाव प्राप्ति विनाश का नामान्तर भाव है। जो दोनों भाव के अतीत हैं वही दोनों भाव में प्रकाश सम्भव होता है। जो आप साकार हैं वही आप निराकार हैं जो आप चेतन हैं वही आप जड़ हैं। यदि आप साकार होय तो पृथिवी, जल, अग्नि, बायु, आकाश, चन्द्रमा, सूर्य्यनारायण यही सप्त धातु या प्रकृति ज्योतिःस्वरूप बिराट पुरुष के स्थूल सूक्ष्म शरीर है। यही साकार निराकार बिराट ज्योतिःस्वरूप आपलोगों का साथ चेतनाचेतन चराचर जगत को लेकर सर्व्वकाल में बिराजमान हैं। आप क्या इनके कोइ एक अङ्ग हैं, न समष्टि साकार हैं? यदि कहिये आप समष्टि हैं तो जब आपका सुषुप्ति अवस्था घटता है, तब स्थूल शरीर बिराट तो पड़ा ही रहता है और प्राणबायु चलता रहता है। परन्तु वह रहते भी क्यों चेतनाचेतन भाव नहीं रहता? जाग्रत और सुषुप्ति में एक प्रभेद यही है कि सुषुप्ति में नेत्र का ज्योतिः नहीं रहता और ज्ञान शून्य होता है। अब समुझकर देखिये चेतना कौन है? जिनके उपस्थित में आप चेतन भाव से समस्त कार्य्य करते हैं और जिनके अनुपस्थित से आप सुषुप्तिकाल में अचेतन भावापन्न होते हैं वही चेतना है। परन्तु वह कौन हैं? यदि कहिये नहीं जानते, तो स्पष्ट ही देखिये, जब आप आपने में चेतना को नही जानते अथवा नही चिनते, तब ज्योतिःस्वरूप बिराट पुरुष में चेतना है या नहीं यह किस प्रकार से निर्णय करने में सक्षम होंगे? इसलिये ही आपलोगों अज्ञानान्ध होकर पूर्ण चैतन्यस्वरूप जो हैं, जिनके तेजोमय चेतन में आपलोग जीव भाव चेतन रहते हैं, जिनके चेतन शक्ति को सङ्कोच से आपलोग सुषुप्तिमें अचेतन रहते हैं, वही पुञ्जीभुत चैतन्य तेजोमय ज्योतिःस्वरूप को जड़ कहते। प्रत्यक्ष देखिये, जगत में चेतनाचेतन भाव परिवर्त्तन को साधारण नियम क्या है? आकाश में ज्योति के

प्रकाश ही अचेतन भावापन्न सुषुप्ति जीव का चेतन जाग्रत अवस्था घटता है। सुषुप्ति अवस्थामें आप तो अचेतन रहते हैं कोइ गुण या शक्ति नही रहता, उपरान्त जाग्रत होकर सर्व्व प्रकार कार्य्य करते हैं। सुषुप्ति अवस्था से जाग्रत अवस्था होनेमें रूप जो परिवर्त्तन होता है, वह किस्के अथवा कौन शक्ति का कार्य्य है? आपका तो सुषुप्ति अवस्था में कौन शक्ति नही रहता अथच विना शक्ति से कार्य्य नहीं होता है। इधर देखते हैं कि ज्योति का प्रकाश से साधारण जीव मात्रका चेतन है। यह देख करभी क्या नहीं समझते हैं कि ज्योतिः ही से आपका चेतना है। जो सब विशेष विशेष दृष्टान्त से अब ही पुर्व्वोक्त साधारण नियम के व्यतिक्रम बोलके मनमें होता है उस्के विचार यथा स्थान में होता है।

यदि कहिये में एक अङ्ग हूं, तो आप कौन अंग।—पृथिवी, जल, या वायु अथवा ज्योतिः? यदि कहिये आप पृथिवी, तो हाड़ मांस प्रभृति मात्र है। यदि कहिये आप जल, तो आप केवल रक्त रस नाड़ी हैं। यदि कहिये आप अग्नि, तो अग्नि द्वारा क्षुधा प्यास लगता है, यदि कहिये आप प्रणवायु, तो प्रणवायु रहते भी सुषुप्ति में आप अचेतन रहते क्यों? यदि कहिये आप ज्योतिः तो स्वीकार करना हुया कि, ज्योतिः ही चेतन हैं और इस जगह विचार समाप्त हुई।

आपका स्वयं ज्ञान नहीं होता है कि, किस्के गुण का प्रकाश से बोध होता है कि, "हम हम" और सुषुप्ति में किस्के गुण का अभाव से आप लोग का बोधाबोध नहीं रहता है, निष्क्रिय रहता है। अथत पुण परब्रह्म सर्व्वशक्तिमान चैतन्य सर्व्वत्र विराजमान हैं, यह स्वीकार करके भी इधर ज्योतिःस्वरूप को जड़ भावना करते हैं। आपका यह बोध नहीं है कि, जो पुरुष अन्तर में चैतन्य हैं वही बाहर में ज्ञान, ज्योतिः, तेजोरूप से प्रकाशमान

रह कर वाहर को प्रकाश गुण द्वारा रूप ब्रह्माण्ड दर्शन करते हैं वो अन्तर में चैतन्य गुण द्वारा वोध कराते हैं कि "हम हैं।" वही जब वाहर के सोइ प्रकाश गुण सङ्कोच करते है तव रूप दर्शन नही कर सके। परन्तु अन्धकार में भी आप चेतन पुरुष रहते हैं, वोध करते हैं कि "हम हैं।" यही चेतन गुण अथवा शक्ति के सङ्कोच करके जव वह निराकार निर्गुण कारण रूप में स्थित होते हैं, तव सुषुप्ति अवस्था में निष्क्रिय भावोदय होता है, समस्त व्यवहार समाप्त रहता है। सुषुप्ति में स्थूल शरीर रक्षा के लिये परमात्मा शरीर में केवल प्राण शक्ति रखते हैं। उस्के द्वारा रक्त चलाचल होता है, नही तो रक्त जमकर स्थूल शरीर सर जाये गा। जैसे सरसोके तेल में आचार रहने से नही सरता, वैसाही प्राण वायु चलने से शरीर नष्ट नहीं होता। इसलिये परमात्मा स्थूल शरीर को आमरण समय तक प्राण शक्ति रखते हैं। यही शक्ति सङ्कोच घटने से शरीर का मृत्यु अवस्था होता है। मृत्यु वो सुषुप्तिके मध्य में यही मात्र भेद है कि, सुषुप्ति में प्राण शक्ति रहता है, मृत्यु में नही रहता। जैसे अग्नि वर्त्तमान में उस्के समस्त क्रिया वर्त्तमान रहता है, अग्नि निर्व्वाण के साथ उस्के समस्त क्रिया कारण में स्थित होता है, एसाही जीवात्मा के वर्त्तमान में समस्त क्रिया होता है और करते हैं; जीवात्मा के निर्व्वाण से समस्त क्रिया कारण में स्थित होगा और सुषुप्ति अवस्था में होता है।

जैसे सिपाहि लोगों में पाहरा का वदलि है, तैसे ही शरीर में भिन्न भिन्न ब्रह्म शक्ति असंख्य प्रकार भिन्न भिन्न कार्य्य करते हैं। उस्के समस्त शक्ति को क्रम क्रम विश्राम होता है। सुषुप्ति अवस्था में प्राण शक्ति को भी विश्राम देना होता है। इसलिये दक्षिन प्राण चलने से वाये नहीं चलता और वाये चलने से दक्षिन नहीं चलता, वाये प्राण चन्द्रमा ज्योतिः दहिना प्राण सूर्य्यनारायण हैं।

यही दोनों ज्योतिःस्वरूप एकही विराट पुरुष की वैष्णव लोगों युगलरूप और तान्त्रिक लोगों प्रकृति पुरुष कहा करते हैं, परन्तु उन लोग अज्ञान के वश होकर नहीं चिनते कि, यह दो किस्का नाम है। अज्ञान के वश आप लोग अपने को अन्तर में चेतन वोल कर स्वीकार करते, परन्तु तेजोरूप ज्योतिः वोल कर स्वीकार नहीं करते और वाहर के जो तेजोरूप प्रत्यक्ष देखते हैं उस्को प्रकाश वोल कर स्वीकार करते हैं, परन्तु चेतन ज्ञान स्वरूप वोल कर स्वीकार नहीं करते हैं। आप लोगों में यही प्रभेद है वोल कर कष्ट भोग करते हैं। जो भितर में चेतन रूप हैं वही वाहर में तेजोमय ज्योतिःस्वरूप प्रकाशमान है। जो वाहर में तेजोमय प्रकाशमान हैं वही अन्तर में चेतनारूप से रहे हैं। जो अन्तर में हैं वही वाहर में हैं यही दोनों में कोइ प्रभेद नहीं हैं। जिन्को ऐसा ही अवस्था वोध है उन्ही का ज्ञान हैं जिन्का ज्ञान है उन्को शान्ति है। जिन्को वस्तु वोध नहीं है उन्का ज्ञान नहीं है जिन्को ज्ञान नहीं है उन्का शान्ति नहीं है।

इतने दुर विचार करके भी आप का मनमे यह आशङ्का रहा कि, यदि ज्योतिः वो चेतना एकही पदार्थ है तो वाहर के ज्योतिः प्रकाश होने से हो जीव देह में चेतना का प्रकाश होगा और ज्योतिः का अप्रकाश होने से जीव देह में भी चेतन का अप्रकाश घटेगा। कभी कोइ समय इस्के अनुमात्र अन्यथा नहीं घटेगा। परन्तु प्रत्यक्ष देखा जाता है मेघ से ढका हुआ अमावस के रात्रमे घोर अन्धकार खोह में भी जीव चेतन भाव में "हम हैं" वोध करते हैं। ज्योतिःके अस्त मात्र हो सव प्राणी निद्रित नहीं होते हैं और उदय के वाद ही और पूर्व्व में, हो कितने प्राणी जाग्रत होते हैं। कोइ कोइ देश में ज्योतिः छव महिना व्यापी अनुदय और वही परिमान समय उदय होता है परन्तु वह देश में

जीवों का छव् महिना निद्रा और छव् महिना जाग्रत तो नहीं होता। अतएव ज्योतिः को चेतना कहने में यह सब विषय का मिमांसा असम्भव है।

विचार करने से देखेंगे कि, आप का आशङ्का का जगह नहीं है। ज्योतिः को चेतन बोल कर स्वीकार करने से जो सब आपत्ति उठायें हैं समस्त ही निरस्त होगा। जिन लोग ज्योतिः को अचेतन कहते हैं, उन लोग भी ज्योतिः का प्रकाश गुण अथवा शक्ति प्रत्यक्ष देखते हैं और बुद्धिमान मनुष्य मात्रही जानते हैं कि परम्परके आक्रम से जगत का तावत कार्य्य निष्पत्ति का मुल शक्ति ज्योतिः हैं। केवल चेतन व्यवहार में ज्योतिः कर्त्तृत्व है या नहीं, यही लेकर ही बिवाद है। अब उपरान्त ज्योतिः को चेतन कहने से क्या खड़ा होता है देखिये, पहिले तो यह देख पड़ता है कि ज्योतिः पुरुष का इच्छा है। और चेतना का व्यापार में ज्योतिः ही का अधिकार है। वाहर और भितर में देखिये ज्योतिः अथवा चेतना के उपर दुसरा कोइ पदार्थ का अधिकार नही है। ज्योति सबको प्रकाश करते हैं, ज्योतिः को कोइ प्रकाश नहीं कर सक्ते। चेतन सब को जानते हैं चेतना को कोइ जान नहीं सक्ते हैं। आप जैसे चेतन इच्छामत अपना कोइ शक्ति को प्रकाश अप्रकाश घटाने सक्ते हैं तैसे ही ज्योतिः जो चेतन हैं वह भी अपना क्रिया प्रकाश वो चेतन यही तिन शक्ति के मध्य में जिस्को सङ्कोच अथवा प्रकाश कर सक्ते हैं इस्में और आश्चर्य्य क्या है? सुषुप्ति में आप का भी चेतना लोप होता है। अथच प्राण शक्ति चलता है। एक का सङ्कोच करने से सब का सङ्कोच करना होगा एसा नियम नहीं है। यह बात समझ होने से सहज ही में देखेंगे कि, ज्योतिः इच्छामय हैं चेतन और प्रकाश गुण संकुचित करके अप्रत्यक्ष उत्ताप अथवा अग्निरूप से कितने कार्य्य करते हैं और उत्ताप गुण को

सङ्कोच करके चन्द्रमा रूप से कितने अपर कार्य्य करते है और प्रकाश गुण को सङ्कोच करके जीव रूप मे चेतन गुणके द्वारा अपर कितने प्रकार कार्य्य करते हैं। और तिन गुण लेकर सूर्य्य-नारायण रूपसे ब्रह्माण्ड का समस्त व्यवहार करते हैं और करीते हैं। जब वह बाहर का प्रकाश वो क्रिया शक्ति संकुचित करके शरीर में चेतन गुण मात्र रखते हैं तव अन्धकार में ढके हुये जीव "हम है" यही मात्र बोध करते हैं। समस्त गुण संकुचित होने से सुषुप्ति अवस्था घटता है। समझने में सहज होता है बोलकर गुण वो शक्ति का प्रकाश वो संकोच कहा गेया। परन्तु परिमान में कमवेश के कारण उल्लिखित कार्य्य घटता रहता है। निश्चित ही संकोच अथवा प्रकाश का प्रयोजन होता नहीं ऐसेही परिमान के कमवेश के कारण भिन्न भिन्न जीवों में चेतन्य का भिन्न भिन्न व्यापार देखा जाता है इच्छामय का इच्छा है। अन्तर वो बाहर में जो घटता है जो कार्य्य करते हैं उन्के इच्छा वही घटता है। वहुत जीव न होने से जगत का विचित्र लीला सम्पन्न नहीं होता इसलिये ज्योतिः स्वरूप परमात्मा प्रत्यक्ष शरीर से प्रकाश शक्ति प्राय लोप किये हैं। नहीं अप्रकाश अन्धकार में चेतन शक्ति शरीर का भेद अनुसार से "हम हैं" बोध करके संसार प्रवाह रचा करते हैं। परमात्मा कृपा करके जीवों के अन्तर में प्रकाश गुण का वड़ती वड़ाने से ज्योतिः ही चेतन और हर एक शरीर गत जीव रूप से परमात्मा के साथ अभेद से उपलब्ध होते हैं। तव जीव देखते हैं कि, इन्द्रियादि के द्वारा ब्रह्माण्ड में जितने कार्य्य सम्पन्न करके भी स्वरूप में वह जो वही हैं। तव सर्व्व संशय भ्रान्ति लय होकर जीव परमानन्द में आनन्द रूप से रहते हैं। यदि ज्योतिःस्वरूप परमात्मा प्रकाश वो चेतन के समय क्रम में एक को प्रकाश दुसरे को सङ्कोच नही करते तो जगत में "हम हैं" यह

ज्ञान नहीं रहता और शरीर को अवलम्बन करके प्रति जीवगत चेतन व्यवहार नहीं चलता। इसलिये प्रकाश के चेतन को प्रभेद घटा कर अन्धकार अथवा अज्ञानाच्छन्न चेतन अर्थात् "हम हैं" यही ज्ञान ज्योतिस्वरूप परमात्मा उत्पन्न करते हैं। यथार्थ पक्ष में ज्योतिः ही चेतना और चेतना ही ज्योतिः हैं। यदि इस बात को आपलोगों का सम्पूर्णरूपसे धारणा नहीं हुआ रहे तो आपलोगों को इन्द्रिय और बुद्धिके द्वारा स्थूलरूप जहांतक समुझ सक्ते हैं, तहांतक स्थूल, सूक्ष्म पदार्थ अन्तर वो बाहर से मिलाकर देखिये अथवा इनके शरणागत होइये तो समुझने में सक्षम होंगे। जो आप में है वही ब्रह्माण्ड के सर्व्वत्र में है, जो आप में नही है वह ब्रह्माण्ड के कोइ स्थान में नही है और हो भी नहीं सक्ता। ब्रह्माण्ड में जो कुछ है वह आप में भी है।

विराट पुरुष के स्थूल चरण पृथिवी बाहर देखते हैं, भितर में आपका हाड़ मांस देखिये। उनका नाड़ी जल है, बाहर में देखते हैं, भितर में आप का रक्त रस नाड़ी देखिये। उनका मुख अग्नि बाहर में देखते हैं, भितर आप का शरीर में प्यास, भोजन, परिपाक शक्ति देखिये। उनका प्राणवायु बाहर में देखते हैं, भितर में आप का श्वास प्रश्वास प्राणवायु चलता है देखिये। उनका कर्ण वो मस्तक आकाश बाहर में सर्व्वत्र देखते हैं, आपका भितर में खुला पुल्लार आकाश वो कर्ण के छिद्र जिस्से सुनते हैं वह देखिये। इतने दुर तक आप स्पष्ट देखते हैं, वो समुझते हैं। परन्तु आप स्वयं क्या हैं, कौन वस्तु हैं और आप का मन बुद्धि जिसके द्वारा आप समुझते हैं वह जो क्या है, नहीं जानते। अतएव आप इस जगह विचार कर के देखिये, यही जो आकाश में चन्द्रमा ज्योतिः देखते हैं जो बाहर में विराट स्वयं को मन है, वही भितर में आप का मन है, जिस्के द्वारा सङ्कल्प

विकल्प करते हैं "हमारा तुम्हारा" समुझते हैं। और यही जो आकाश में सुर्य्यनारायण देखते हैं, इन्ही बाहर में विराट पुरुष के आत्मा अर्थात परमात्मा और भितर में आप हैं, आपका बुद्धि वो चैतन्य अर्थात् जीवात्मा, जो आप रूपसे चेतन होके विचार-पूर्व्वक सत् असत् निर्णय करते हैं वा कराते हैं वो नेत्र द्वार से रूप कर्णद्वार से शब्द, नासिका द्वार से गन्ध वो जिह्वा द्वार से रस ग्रहण करते हैं। प्रत्यक्ष आपकी जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति तिन अवस्था घटता है। जाग्रत में आपका अर्थात् विराट पुरुष के रूप सुर्य्यनारायण, स्वप्न में चन्द्रमा ज्योतिः है अर्थात् प्रकाश रहते भी कितने अंश अन्धकार है, जैसे आपके स्वप्नावस्था में चेतना है तथाच नही है। सुषुप्ति अवस्था अमावशकी रात्रि, गुण क्रिया का समाप्त है। यही तिन अवस्था के परिवर्त्तन रहते भी तिन अवस्था ही में आप जो पुरुष हैं वही एकही रहते हैं। स्वरूप में आप सदा जो वही रहते हैं। यह तिन अवस्था में आप का कोइभी परिवर्त्तन नहीं घटता। ऐसेही चन्द्रमा सुर्य्यनारायण ज्योतिःस्वरूप विराट पुरुष सर्व्वकाल में एकही वर्त्तमान हैं। उदय अस्त में प्रत्यक्ष वो अप्रत्यक्ष रूप से भासमान होने से भी चैतन्यस्वरूप वह चराचर, स्त्री, पुरुष, आपलोगों को लेकर असीम अखण्डाकार एकही पुरुष सर्व्वकाल से सर्व्वावस्था में विराजमान रहते हैं।

यह सब बातों से आपलोग का आशङ्का उठसक्ता है कि, निराकार, निर्गुण, सर्व्वातीत जो पदार्थ हैं उनको रहित करना होता है। परन्तु ऐसा आशङ्का अमूलक है। जो साकार वही निराकार वो जो निराकार वही साकार है। वस्तु जो है वही आप लोगों कि सहित चराचर को लेकर सर्व्वकाल में अभेद से विराजमान हैं साकार निराकार वस्तु नही है। भाव मात्र है।

निराकार कारण भाव, साकार कार्य्य भाव, वस्तु दोही एक है। कार्य्य न रहनेसे कारण और कारण न रहनेसे कार्य्य नहीं रहती है। कार्य्य कारणभाव पर दृष्टि रहित होने से स्वरूपभाव अर्थात् वस्तु स्वयं रहते हैं। वह भाव अथवा वह वस्तु जो कौन है अथवा कैसा है वह निर्धारण होता है। यह निर्द्दिश शून्य "जो उन्हीं" को निर्द्दिश के चेष्टा में मनुष्य नाना भ्रान्ति वो संस्कार में पतित होकर अभिमान के वश दुःख भोग करते हैं वो द्वेष हिंसा परवश होकर जगत् में अनिष्ट के कारण होते हैं। ऐसे अमङ्गल के और एक कारण साकार निराकार में वस्तु पक्ष भेद कल्पना है। जो मनुष्य साकार वही मनुष्य निराकार है। जो माता पिता सुषुप्ति अवस्था में निष्क्रियभाव से रहते हैं, वही जाग्रत होकर समस्त कार्य्य करते हैं; दोनों अवस्था में मनुष्य एकही हैं। ऐसेही निराकार साकार एकही पुरुष हैं। वह निराकार में कोई कार्य्य नहीं करते हैं, साकार विराट ज्योतिःस्वरूप नामरूप जगत्भाव से विस्तारमान होकर अनन्त कार्य्य सम्पन्न करते हैं। आपलोग इस विषय में कोई दो भाव मत करिये। जो निराकार साकार चैतन्यमय उनको पूर्णभाव से धारणा करिये। वह दयामय निज गुणों से आपलोगों को परमानन्द में आनन्दरूप रखेंगे।

---

## वेद किसको कहते हैं।

किसी किसी ने कहते हैं कि, वेद अनादि—ईश्वर की बनाई है, अपरापर शास्त्र आधुनिक मनुष्य कल्पित है, सुतरां वह सब सम्पूर्ण भ्रम है। अतएव वेद को ईश्वर की वाक्य बोल कर मान्य करना और उस के मतमें चलना उचित है। और किसी किसी ने कहते हैं कि वेद अनादि सत्य है; परन्तु सब किसी ने वेदों का

अर्थ समुझने नहीं सक्ते। इस लिये ऋषिलोगों ने वेद को अव-लम्बन करके पुराण तन्त्रादि नाना शास्त्र प्रस्तुत किये हैं। अतएव यह भी वेद को मत सत्य है और इन के मतमें चलना कर्त्तव्य है। खीष्ट अर्थात् ईशा उपासकगणोंने कहते हैं कि बाइबेलही एकमात्र सत्य धर्मपुस्तक वो ईश्वर को वाक्य है; अन्यान्य शास्त्र मिथ्या है। और मुसलमानगणोंने कहते हैं कि, कोराणही एकमात्र सत्य शास्त्र है, अन्यान्य शास्त्र मिथ्या वो सम्पूर्णभ्रम है।

अब यहां विचार करके देखना कर्त्तव्य है कि, यह सब धर्म-मतों में कौन सत्य और कौन धर्मावलम्बी यथार्थ सत्य धर्म को पालन करते हैं। सत्य वा धर्म एक है वा अनेक? और वह सत्य-स्वरूप परब्रह्म एक हैं वा दो? "सत्य" एक सिवाय दो नहीं हो सक्ता—यह स्वतः सिद्ध है; और वही सत्यस्वरूप परब्रह्म एक सिवाय दो नहीं हैं, यह सर्व्व शास्त्रों का मत है।

यदि एकही सत्यपुरुष द्वारा वेद, उपनिषद्, बाइबल, कोराण, पुराण, तन्त्रादि लिखी गई हो तो कदापि उनलोगों में विरोध वो मतभेद दृष्ट नहीं होगी। ईश्वर मनुष्य नहीं हैं कि वयस के सहित ज्ञान और ज्ञान के सङ्ग मत की भिन्नता दृष्ट होगी। अतएव ईश्वर के द्वारा सर्व्वशास्त्र लिखी हो तो सर्व्व शास्त्रही के मत सर्व्व जीवों के हितकर वो एकही होगी इसमें सन्देह नहीं है। तब जो यह सब शास्त्र में मतभेद दृष्ट होता है इस के कारण क्या? इस के कारण और कुछही नहीं है केवल शास्त्रकारलोगों के परस्पर अवस्थाभेद हेतु समाजिक स्वार्थपरता है। जिनलोग अपने अपने सामाजिक स्वार्थसिद्धि के लिये शास्त्र लिखे हैं, उनलोगों के सङ्ग अपरलोगों की लिखित शास्त्र के निश्चयही मिल नहीं रहेगी। जो सकल महापुरुष ने निःस्वार्थभाव से सारतत्त्व लिखे हैं वो लिखेंगे, वह सब किसी के पक्षमेंहीं कल्याणकर होगा और जगत् का कोई सत्यतत्त्व के अन्वेषण करने-वाले से अमिल नहीं होगी

यह निश्चय जानेंगे। "सत्य" सर्व्व स्थानही वो सब किसी के निकटही सत्य है; "मिथ्या" सकल स्थानही वो सब किसी के निकटही मिथ्या है। पूर्व्वकाल के ऋषिलोगों में जो जैसा अवस्था प्राप्त हुए थे, वह वैसाही मत प्रकाश किये हैं और उसी उसी अवस्थापन्न मनुष्यलोगों ने उसी उसी प्रकार भाव समुझे हैं, और समुझते हैं। अपरापर अवस्थापन्न मनुष्यलोगों ने उन के भाव ग्रहण करने में सक्षम नहीं होते। जैसे अज्ञान अवस्थापन्न मनुष्य लोगों ने ज्ञानवान् मनुष्यलोगों का भाव और अज्ञान वो ज्ञान अवस्थापन्न मनुष्योंने स्वरूप अवस्थापन्न मनुष्यलोगों का भाव समुझ नहीं सक्ते हैं, और स्वप्नावस्थापन्न मनुष्यलोगोंने जाग्रतावस्थापन्न मनुष्यलोगों का भाव समझ नहीं सक्ते, और स्वप्न वो जाग्रत दोनों अवस्थापन्न मनुष्यलोगोंने सुषुप्ति अवस्थापन्न मनुष्यलोगों का भाव समुझ नहीं सक्ते हैं।

प्रथम विचार करके देखना उचित है कि वेद, उपनिषद, वाइवेल, पुराण, कोराण, किस को बोलते हैं? और वह सब कौन वस्तु है? निराकार न साकार? यदि निराकार हो तो वह अदृश्य मन बाणी के अतीत वो इन्द्रियों के अगोचर, और भिन्न भिन्न न होकर एकही हैं। यदि साकार हो तो प्रत्यक्ष दृश्यमान् विराट ब्रह्म हैं। इस के सिवाय और कोई हैं नहीं। तब किस को वेद, उपनिषद, वाइवेल, कोराण, पुराणादि कहते हैं? यदि सत्य को कहिये तब तो निराकार साकार परिपूर्ण अखण्डाकार एकही अनादि सत्य विराजमान हैं। यदि मिथ्या को कहिये तो मिथ्या कौन वस्तु? यदि कागज सियाही को कहिये तब तो पृथवी के जितने दप्तरखान में कागज सियाही हैं सबही वेद, उप-निषद, वेदान्त, वाइवेल, पुराण, कोराण, हो सक्ता है। यदि शब्द को कहिये तब तो शब्द मात्रही आकाश का गुण है, सुतरां सकल

शब्दही वेद, उपनिषद, वाइवेल, कोराण, पुराण है। यदि आकाश को कहिये तो एकही सर्व्वव्यापी आकाश अनादिकाल से है, उन में कोई उपाधि वा किसी के सङ्ग विरोध नहीं है। अतएव किसी मत के सङ्ग किसी को भी विरोधी होना असम्भव है। यदि ज्ञान को कहिये तो ज्ञान एक है न अनेक? तब ज्ञान तो एकही है, एकही ज्ञानमय ईश्वर अखण्डाकार से आपलोगों के भीतर बाहर में परिपूर्णरूप से विराजमान हैं। आपलोग कौन वस्तु को वेद, उपनिषद, वाइवेल, पुराण, कोराण बोल कर स्वीकार करते हैं? आपलोग अपने अपने जय, पराजय, मान, अपमान सकल प्रकार मतामत नाना प्रकार भाव वो सामाजिक मिथ्या स्वार्थ परित्याग करके स्थिरचित्त से निरपेक्षभाव से विचार करके देखिये, और एकमात्र सारवस्तु जो निराकार साकार पूर्णरूप से विराजमान हैं, वही पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप आत्मा गुरु को अखण्डाकार से हृदय में धारण करिये और उन के शरणागत होइये, तब तो आपलोगों की मन का सर्व्वप्रकार भ्रम दूर हो जायगा वो शान्ति पावेंगे, और वेद, उपनिषद, वेदान्त, वाइवेल, पुराण, कोराण किस को कहते हैं, वह जान सकेंगे जो यह समस्त उन्हीं का नाम है, जो मनुष्य पूर्ण परब्रह्म ज्योतिःस्वरूप भगवान को मानते हैं वही मनुष्य यथार्थ वेद, उपनिषद, वाइवेल, कोराण, पुराण प्रभृत्ति सकल शास्त्र का मर्य्यादा रखते हैं। न तो जो मनुष्य वेद, उपनिषद, वाइवेल, कोराण, पुराण प्रभृत्ति को मुह से माना करते हैं, अथच वेद, उपनिषद, वाइवेल, कोराण, पुराण किस को बोलते हैं, उस का अर्थ नहीं समुझते हैं और उस्के मर्म्मानुसार कार्य्य नहीं करते, स्वार्थ प्रयुक्त अन्तर में एक भाव वो बाहर में और एक भाव प्रकाश करते हैं, सोई मनुष्य यथार्थ वेदादि शास्त्रों के अमर्य्यादाकारी—भांड़ हैं। यह सब मनुष्यों का किसी काल में ही मङ्गल नहीं है, वे लोगोंने चिरकालही अशान्ति भोगु